फ़रीदाबाद सामुदायिक विकास-योजना के एक गाँव में फ्रांस के विदेश मंत्री श्री पिने

कुरुक्षेत्र

सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन का मासिक मुखपत्र

वर्ष १] अप्रैल १९५६ [अंक ६

विषय-सूची

आवरण चित्र [कलाकार : सुशील सरकार]		
अभिरुचि ! [व्यंग्य-चित्र]	संमुग्रल	२
लोक सभा में बहस	...	३
भारतीय गाँवों के लिए नए अवसर	क्लिफर्ड एच० विल्सन	१२
गाओ ! मेरे मानव ! गाओ ! [कविता]	चक्रवर्ती राजगोपालाचारी	१४
राँची सामुदायिक विकास-योजना [चित्रावली]	मोतीराम जैन	१५-१८
सामुदायिक विकास के तीन उद्देश्य	के० सन्तानम	१९
पहाड़ हिलाए जा सकते हैं [कहानी]	एच० आर० मलोजा	२१
होशंगाबाद सामुदायिक विकास खण्ड	भालचन्द्र केलकर	२५
'विस्तार' शब्द से क्या तात्पर्य है ?	जॉन वायगेट	२८
प्रगति के पथ पर	...	३१

सम्पादक :
केशवगोपाल निगम
[सहकारी सम्पादक, प्रकाशन विभाग]
उप-सम्पादक : *मनोहर जुनेजा*

मुख्य कार्यालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट,
दिल्ली—८

वार्षिक चन्दा २॥)
एक प्रति का मूल्य ।)

विज्ञापन के लिए
बिजनेस मैनेजर, पब्लिकेशन्स डिवीजन,
दिल्ली—८ को लिखें

अभिरुचि !

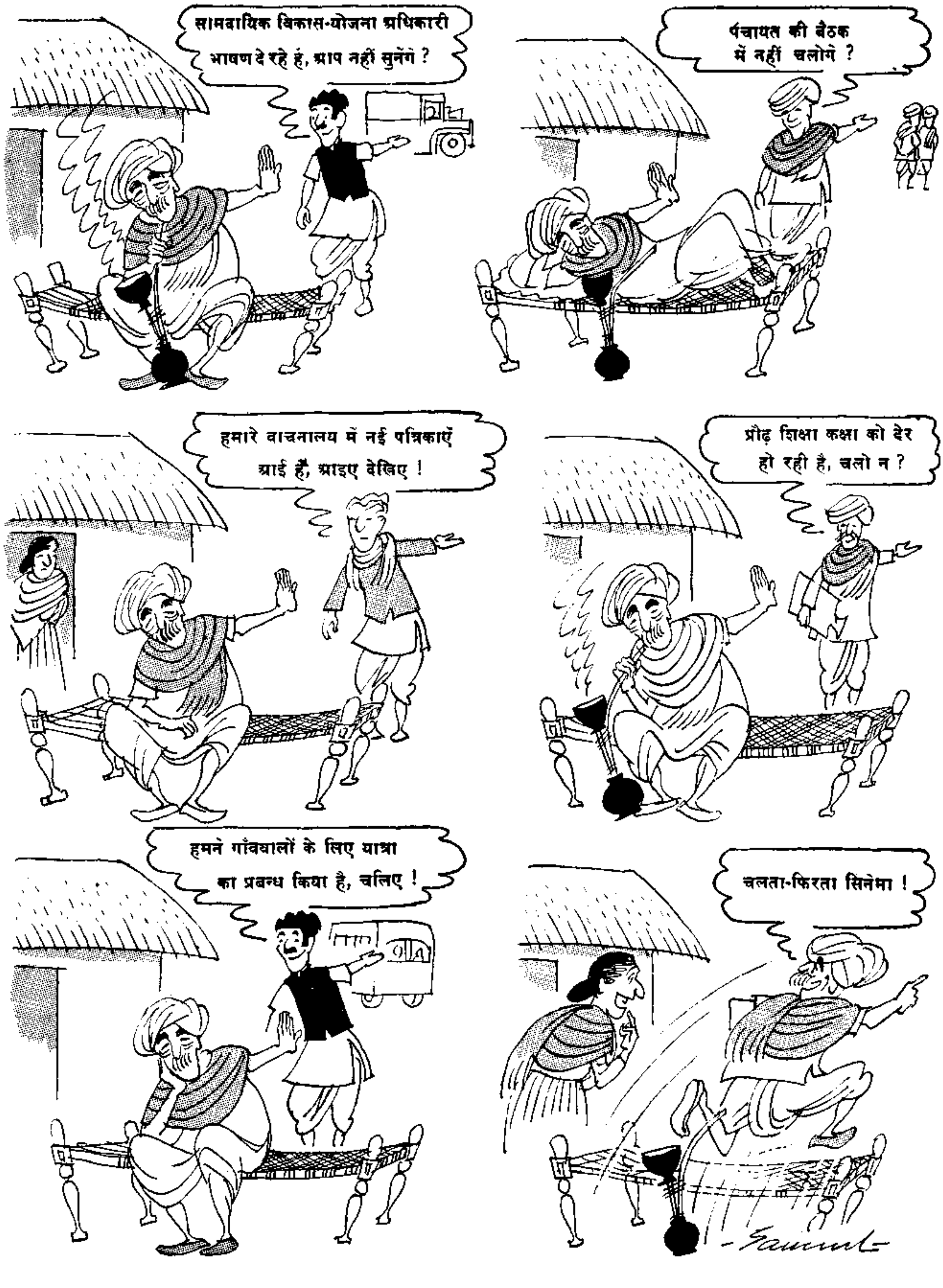
सामदायिक विकास-योजना अधिकारी भाषण दे रहे हैं, आप नहीं सुनेंगे ?
पंचायत की बैठक में नहीं चलोगे ?
हमारे वाचनालय में नई पत्रिकाएँ आई हैं, आइए देखिए !
प्रौढ़ शिक्षा कक्षा को देर हो रही है, चलो न ?
हमने गाँववालों के लिए यात्रा का प्रबन्ध किया है, चलिए !
चलता-फिरता सिनेमा !
-Samuel

हम सही रास्ते पर हैं !

एस० एन० मिश्र

[लोकसभा के पिछले अधिवेशन मे ६ दिसम्बर, १९५५ को सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के कार्य का निरीक्षण करने के लिए एक समिति नियुक्त करने के एक गैर-सरकारी प्रस्ताव पर जो वाद-विवाद हुआ था उसका विवरण हम "कुरुक्षेत्र" के फरवरी अंक में प्रकाशित कर चुके हैं। यहाँ हम उस प्रस्ताव पर २ मार्च, १९५६ के वाद-विवाद में भाग लेने वाले सदस्यों के कुछ भाषणों तथा योजना उप-मन्त्री के उत्तर का सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं—सम्पादक]

मैं सदन को विश्वास दिलाता हूँ कि योजना या इसके किसी पहलू की आलोचना का सरकार स्वागत करती है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम मुख्यतः जनता का कार्यक्रम है। आलोचना ऐसे किसी भी कार्यक्रम का जीवन है। इस लिए जनता और सदन के सदस्यों की सुविचारित आलोचना कार्यक्रम के लिए अत्यधिक उपयोगी है। सच तो यह है कि ऐसी आलोचना के अभाव में हम यह शिकायत कर सकते हैं कि लोग हमारी तरफ़ पूरी तरह या बिलकुल भी ध्यान नहीं दे रहे या वे हमारे कार्यक्रम के प्रति उदासीन हैं। मैं उन लोगों में से एक हूँ जो इस बात में विश्वास रखते हैं कि योजना की आलोचना उसके प्रति उदासीनता से कहीं अच्छी है। किसी हद तक यह कहना ठीक है कि योजना की आलोचना करना वास्तव में उसका सुधार करना है। माननीय सदस्यों ने जो आलोचना की है वह कार्यक्रम में उनकी रुचि और कार्यक्रम से उनकी आशाओं की द्योतक है। इसलिए इसका मैं हार्दिक स्वागत करता हूँ।

प्रश्न उठता है कि हम इस सामुदायिक विकास आन्दोलन को इतना महत्व क्यों देते हैं? इसका कारण यह है कि हमारे देश के सामने केवल एक आर्थिक ढाँचा खड़ा करने की समस्या ही नहीं है, बल्कि एक राष्ट्र के निर्माण का प्रश्न है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए हमारे प्रधान मन्त्री इस कार्यक्रम को अत्यधिक महत्व देते हैं। उनका कहना है कि यह कार्यक्रम संसार की सर्वाधिक क्रान्तिकारी और आशाप्रद वस्तु है। मैं समझता हूँ कि यह कार्यक्रम भारतीय जनतन्त्र का मुख्य शक्ति-स्रोत और पोषक बन जाएगा।

हममें से हरेक व्यक्ति यह जानता है कि आर्थिक स्वतन्त्रता का हमारा लक्ष्य काफ़ी दूर है। इस आन्दोलन की एक विशेषता यह है कि इसने लोगों में नई आशा और विश्वास भर दिया है जिसके कारण हम अपने लक्ष्य को अप्रत्याशित रूप से जल्दी प्राप्त कर सकेंगे। सरकार कार्यक्रम की सफलताओं से कहीं अधिक इसकी त्रुटियों और दोषों की ओर ध्यान दे रही है। हमें अच्छी तरह मालूम है, शायद हम से अधिक अच्छी तरह और किसी को मालूम न हो, कि इस समय भी इस आन्दोलन में कई महत्वपूर्ण दोष हैं। यह बात हमसे छुपी हुई नहीं है कि कुटीर उद्योगों और सहकारिता के क्षेत्र में हम कोई खास प्रगति नहीं कर पाए हैं। हम सच को छुपाने की कोशिश नहीं करते। उन सदस्यों से हम सहमत हैं जिन्होंने कार्यक्रम की इन कमियों पर ज़ोर दिया है।

हमें यह विदित है कि आन्दोलन के प्रारंभिक काल में विभिन्न विभागों में पर्याप्त सहयोग नहीं था। आरम्भिक अवस्था में कुछ कमज़ोरियाँ अवश्य रही होंगी। यह भी सम्भव है कि कुछ वकास-योजनाएँ लाल फ़ीताशाही का शिकार होकर रोज़मर्रा की बात बन कर रह गई हों। यह भी सम्भव है कि कई स्थानों पर, जैसा कि कुछ सदस्यों ने कहा है, कार्य-क्षेत्र में सरकारी अफ़सरों का ही का बोलबाला हो। इन सब से बढ़ कर त्रुटि यह भी रही होगी कि जनता के अपेक्षाकृत दरिद्र वर्ग को कार्यक्रम के लाभ का उचित भाग न मिला हो। परन्तु पिछले दो वर्षों में जो काम हुआ है, उसको देखकर इस बात में बिलकुल सन्देह नहीं रहता कि इन कठिनाइयों में से अधिकतर पर हमने काबू पा लिया है और अब हम इस आन्दोलन के वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति की ओर बढ़ रहे हैं। शुरू में हमारे पास पर्याप्त प्रशिक्षित कर्मचारी नहीं थे। आप जानते हैं कि यह कार्यक्रम हमारे लिए शायद बिलकुल नई चीज़ है। इसलिए ज्यों-ज्यों साल गुज़रते जाते हैं, हम इस आन्दोलन से नए-नए अनुभव प्राप्त

करते जाते हैं, नई-नई बातें सीख रहे हैं। अब हमारे पास पहले से अधिक सन्तोषजनक प्रशिक्षण व्यवस्था है। अब विभिन्न विभागों में पहले से अधिक सहयोग भी पाया जाता है। इसी प्रकार कुछ ऐसे प्रशासनिक परिवर्तन किए गए हैं जिनके फलस्वरूप प्रशासन में सुधार हुआ है और काम भी तेज़ी से होने लगा है।

माननीय सदस्य ने पूछा था कि हम कुटीर उद्योगों और सहकारिता को बढ़ावा देने के लिए क्या कर रहे हैं? अर्थ व्यवस्था के इस क्षेत्र को सशक्त बनाने के लिए हमने २६ निर्देशक विकास-योजनाएँ (पायलट प्रोजैक्ट) आरम्भ की हैं। इनको शुरू अभी २-३ महीने ही हुए हैं। इन से प्राप्त अनुभव के आधार पर हम इस का विस्तार कर सकेंगे।

कुछ और मापदण्ड भी हैं, विशेषकर वे जो कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने प्रस्तुत किए हैं। हम यह दावा नहीं करते कि हम पर्याप्त रूप से उन पर पूरे उतरते हैं। इन मापदण्डों में से एक है—क्या गाँववासी के हृदय में प्रगति करने की इच्छा घर कर चुकी है और क्या प्रगति के लिए आवश्यक नए ज्ञान को वह प्राप्त करना चाहता है? दूसरा मापदण्ड है—क्या उसमें आत्म-विश्वास की भावना आ गई है, क्या उसमें अपनी समस्याएं हल करने की योग्यता बढ़ चुकी है और क्या उसने अपनी क्षमताओं और महत्व के बारे में नई धारणा बनाई है? तीसरा है—क्या गाँव की जनतन्त्रीय संस्थाओं के कारण उसमें आपसी सहयोग से कार्य करने की भावना आ चुकी है? चौथे—क्या उसके जीवन-स्तर में कुछ सुधार हुआ है? सुधार सामाजिक, आर्थिक और नैतिक तीनों प्रकार का हो सकता है। अगर हम इन सभी मापदण्डों पर पूरा उतरना चाहें, तो हमें बहुत अधिक काम करना पड़ेगा। इन के सम्बन्ध में तो केवल इतना ही कहा जा सकता है कि यह लक्ष्य स्वभावतः ऐसे हैं जिन्हें धीरे-धीरे प्राप्त किया जा सकता है। एक विशेषज्ञ ने कुछ समय पूर्व ठीक ही कहा था कि इन प्रश्नों का सही उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में नहीं दिया जा सकता, न ही उन्हें एकदम प्राप्त किया जा सकता है। इन लक्ष्यों तक तो धीरे-धीरे पहुँचा जाएगा। इसी लिए मैं समझता हूँ कि कुछ समय बीत जाने पर ही हम इन प्रश्नों के उत्तर दे सकेंगे।

इन सब प्रश्नों में वास्तविक चीज़ को महत्व दिया गया है और प्रस्ताव प्रस्तुतकर्ता ने भी इसी चीज़ पर ज़ोर दिया था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम को आरम्भ हुए कुछ वर्ष हो गए परन्तु जीवन के नैतिक और सांस्कृतिक पहलुओं में परिवर्तन लाने के हमारे मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति में अभी कुछ नहीं हुआ। माननीय सदस्य ने यह भी कहा था कि गाँववालों में अपनी दशा में सुधार करने की तीव्र इच्छा नहीं है और न ही वे इस काम में पहल करते हैं। मुझे खुशी है कि उन्होंने कार्यक्रम की सब से महत्वपूर्ण वस्तु (सांस्कृतिक पहलू) पर ज़ोर दिया, परन्तु हैरानी भी कि वह इस नतीजे पर पहुँचे। अगर आन्दोलन के इस पहलू की प्रगति ही संदिग्ध है, तो मैं समझता हूँ कि हमारा सारा आन्दोलन ही बेकार है। इसके बिना तो हमारा आन्दोलन प्राणहीन है। भौतिक सफलताओं का अपना महत्व है परन्तु उनसे आन्दोलन की सफलता नहीं है। नई सड़कों, स्कूलों की नई इमारतों, कूड़े के गड्ढों और ऐसी ही अन्य वस्तुओं के बारे में आँकड़े जमा करने में सफलता नहीं है। वास्तविक सफलता तो लोगों के हृदय और बुद्धि को बदलने में है, उनके विचारों और आचरण में परिवर्तन करने में है। यह प्रश्न उपयुक्त ही है कि ग्राम्य क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के विचारों और आचरण में कितना परिवर्तन हुआ है।

मुझे विश्वास है कि वांछनीय सांस्कृतिक परिवर्तन हो रहा है। इसके कुछ उदाहरण मैं आपके सामने रखता हूँ। अब तक मैं देश के विभिन्न राज्यों के ८-६ विकास-योजना-क्षेत्रों का दौरा कर चुका हूँ और जो कुछ भी कह रहा हूँ अपने अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ। गाँवों में जहाँ भी यह आन्दोलन पहुँचा है, एक नई जागृति की लहर दौड़ गई है। यह बात अक्षरशः सत्य है और इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि गाँवों में नया जोश है। हाल ही में एक विकास-योजना-क्षेत्र में जब पहुँचा तो एक बड़े सामाजिक कार्यकर्ता ने, जिसका मैं आदर करता हूँ, मुझे बताया कि उस ज़िले में हालांकि कुछेक ही राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड हैं, तो भी वहाँ इतनी हलचल रहती है कि सारे साल दम मारने की फ़ुर्सत नहीं मिलती। उन गाँवों में बड़े पैमाने पर काम चल रहा है।

उत्तर प्रदेश राज्य के सहारनपुर ज़िले में रणखण्डी नाम का एक गाँव है। हाल ही में समाज शास्त्रियों के एक दल ने इस बात का पता लगाने के लिए गाँव में जाँच की कि कहाँ तक वहाँ के लोगों में सांस्कृतिक परिवर्तन हुआ है। इस जाँच के परिणाम तो अभी मिले नहीं लेकिन उन लोगों ने मान लिया है कि पहले जनता में दरिद्रता में भी सन्तुष्ट रहने की जो भावना थी, वह खत्म हो रही है। इस भावना के मिट जाने से उनमें आगे बढ़ने की इच्छा पैदा हो गई है। लोगों की संस्कृति और मनोवृत्ति में परिवर्तन आ गया है। लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हो रहा है और काफी तेज़ रफ्तार से हो रहा है, इसमें सन्देह की कोई गुंजायश नहीं। इस जाँच से यह सब बातें साफ़ हो गई हैं।

मैं आपके सामने एक उदाहरण रखता हूँ जो कुछ रोज़ पूर्व एक पत्रकार ने एक समाचार पत्र में छापा था। वह इस प्रकार है कि लोगों के बचत-सम्बन्धी विचारों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। इस पत्रकार ने सोनीपत सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्र का दौरा किया और लौट कर कहा कि लोग सामाजिक समारोहों और ऐसे ही अन्य समारोहों पर होनेवाले व्यय को कम कर रहे हैं। सोनीपत सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्र में ब्याह-शादी पर एक ग्रामीण का औसत खर्चा अब पहले से आधा रह गया है। यह चीज़ लोगों के बचत के सम्बन्ध में दृष्टिकोण पर प्रकाश डालती है और देश के विकास के लिए इसका अत्यधिक महत्व है। अगर लोगों में बचत की भावना पैदा की जा सके, विशेषत; सामाजिक व्ययों में कमी करके, तो मैं समझता हूँ कि हमें विकास के लिए आवश्यक साधन देश में ही जुटाने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

प्रस्ताव पेश करनेवाले माननीय सदस्य ने कहा था कि यह आन्दोलन गाँववालों में विकास कार्य के प्रति रुचि पैदा करने में असफल रहा है। इस बारे में जो कुछ कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने कहा है, मैं उसको नहीं दोहराऊँगा। परन्तु संगठन की पिछली रिपोर्ट की प्रस्तावना ही में इस बात पर खास तौर पर ज़ोर दिया गया है। इसी रिपोर्ट के अनुसार गाँववाले अब संगठित रूप से काम करने के महत्व को पहले से कहीं अधिक समझने लगे हैं। यह भी कहा गया है कि ज्यों-ज्यों सृजनात्मक कार्य करने के अवसरों में विस्तार हो रहा है त्यों-त्यों सदियों पुराना जात-पाँत का भेद-भाव मिटता जा रहा है।

कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन जैसे स्वतन्त्र और विशेषज्ञ संगठन द्वारा प्रस्तुत की गई इन दलीलों को देखते हुए मुझे इस बात का विश्वास नहीं होता कि गाँववालों की सामुदायिक विकास कार्य के प्रति कोई रुचि नहीं है।

मुझे विश्वास है कि यह महत्वपूर्ण बात तो माननीय सदस्य को मालूम ही होगी कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम पर जहाँ सरकार ने ३० करोड़ रुपए व्यय किए हैं, जनता का योगदान भी १८ करोड़ रुपए से कम नहीं रहा है। यह तथ्य तो जनता की सामुदायिक विकास कार्य की तरफ रुचि का निर्णायक प्रमाण है।

अब मैं एक दूसरे महत्वपूर्ण पहलू पर आता हूँ जिस पर सदन के कई सदस्यों ने ज़ोर दिया था। सदस्यों ने आलोचना की है कि सरकारी कर्मचारियों के दृष्टिकोण में अब तक कुछ फर्क नहीं पड़ा है। मनुष्य के निर्माण में समय लगता है। हम भी अपने आप में नई अवस्था के अनुकूल परिवर्तन नहीं कर पाए हैं, इसलिए हम उनसे कैसे आशा कर सकते हैं कि इतने थोड़े समय में वे अपने आप को बदल लें। कर्मचारियों के बदलने में कुछ समय लगेगा।

लेकिन आपके सामने एक उदाहरण रखता हूँ। हाल ही में एक बड़े पत्रकार ने कई सामुदायिक विकास-योजनाओं के दौरे से लौटने पर कहा था कि सरकारी कर्मचारियों की मनोवृत्ति में बहुत परिवर्तन हुआ है। उस पत्रकार का कहना है कि इस परिवर्तन से वह भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाए।

हाल ही में एक सरकारी कर्मचारी ने कहा था कि वास्तविक काम की लपेट में आने से कर्मचारियों के दिलोदिमाग़ में बहुत फर्क पड़ा है। उसी कर्मचारी का कहना है—"सरकारी कर्मचारी समझते थे कि वे लोगों को कार्यक्रम की लपेट में ले आएँगे, परन्तु उन्हें खुद भी हैरानी हुई जब उन्होंने महसूस किया कि खुद वे भी कार्यक्रम की लपेट में आ गए हैं। इस लहर का उनमें से हरेक पर असर पड़ा है, इसलिए हरेक के दृष्टिकोण में ज़मीन-आसमान का फ़र्क पड़ गया है।"

ऊपर जिस पत्रकार का उल्लेख हुआ है, वह अपने दौरे में राजस्थान के एक कर्मचारी से मिला। इस कर्मचारी के सामने जब वापस जयपुर सचिवालय में भेजे जाने का प्रश्न रखा गया, तो उसने अपने पुराने काम से घृणा-सी दिखाई। इससे आप अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि कर्मचारियों के दिलोदिमाग़ पर इस कार्यक्रम का क्या प्रभाव पड़ा है।

सांस्कृतिक परिवर्तन के बाद अब मैं भौतिक सफलताओं पर आता हूँ। प्रस्ताव प्रस्तुतकर्ता ने कहा था कि हमारी भौतिक सफलताएँ समुद्र में केवल एक बूँद के बराबर हैं। हाँ, हमारी निस्सीम आवश्यकताओं को देखते हुए तो यह बात सच है, लेकिन हमने इस कार्यक्रम पर जितना खर्च और जितनी मेहनत की है, उसके अनुसार तो हमारी सफलता सन्तोषजनक है, इस बात में मुझे सन्देह नहीं। सफलताओं के पूरे आँकड़े देने की बजाय, यहाँ भी मैं कुछ वैज्ञानिक सर्वेक्षणों के नतीजों का ही ज़िक्र करूँगा।

प्रस्ताव प्रस्तुतकर्त्ता ने हमारे सिंचाई कार्यक्रम की सफलता के बारे में सन्देह प्रकट किए थे। मैं मानता हूँ कि जितना काम हुआ है, उससे अधिक किया जा सकता था, लेकिन इसका मतलब यह तो नहीं कि हमने कुछ भी नहीं किया। हमारे सिंचाई कार्यक्रम के अन्तर्गत १६ लाख एकड़ नई भूमि की सिंचाई की जाने लगी है। हमारे कृषि-उत्पादन में जो लगभग १५-२०

प्रतिशत की वृद्धि हुई है, उसका कारण यह सिंचाई कार्यक्रम और खेती करने के अच्छे तरीके हैं। जो सर्वेक्षण किए गए हैं, उनसे यह बात साफ़ ज़ाहिर है।

मध्य प्रदेश के मोर्सी विकास-योजना-क्षेत्र में हुए सर्वेक्षण की ओर मैं आप का ध्यान विशेष तौर पर दिलाना चाहता हूँ। यह सर्वेक्षण अभी पूरा नहीं हुआ है। अब तक की गई जाँच से पता चला है कि उन्नत किस्म के बीजों को इस्तेमाल करनेवाले किसान परिवारों की संख्या १९५३ के २७.९ प्रतिशत से बढ़ कर १९५४ में ५७.०३ प्रतिशत हो गई है। इसी प्रकार सामूहिक हित के कार्यों में भाग लेने वाले परिवारों में भी काफी वृद्धि हुई।

श्री एन० एम० लिंगम् ने सुझाव रखा है कि गैर-सरकारी लोगों को भी मूल्यांकन संगठन से सम्बद्ध किया जाए। परन्तु मूल्यांकन का काम ऐसा है कि इसके लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है—कुछ अंश तक विशेषज्ञों का होना आवश्यक है। इसलिए हर कोई इस काम में हिस्सा नहीं ले सकता। फिर यह बात भी क्यों भुला दी जाती है कि मूल्यांकन संगठन सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन के प्रभाव क्षेत्र से परे, पूर्णतया स्वतन्त्र संगठन है। इस लिए इसका मत पक्षपात-रहित और तथ्यों पर आधारित होता है। कार्यक्रम मूल्यांकन रिपोर्टों में हमारे काम को जिस ढंग से आँका गया है उससे साफ़ है कि यह संगठन सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन की किसी तरह की तरफ़दारी नहीं करता।

वादविवाद के दौरान में योजना-क्षेत्र (प्रोजैक्ट) सलाहकार समितियों के काम की बहुत आलोचना की गई थी। कुछ माननीय सदस्यों का कहना है कि उन्होंने सन्तोषजनक ढंग से काम नहीं किया है। अगर यह सत्य है तो हमें चिन्ता होनी चाहिए क्योंकि सामुदायिक विकास कार्यक्रम बनाने और कार्यान्वित करने में गाँववालों का सहयोग प्राप्त करने की ज़िम्मेदारी इन्हीं समितियों पर है। इसलिए अगर यही समितियाँ पूरी तरह काम नहीं करती हैं और अपनी उपयोगिता सिद्ध नहीं करती हैं, तो सारे आन्दोलन के नष्ट होने की सम्भावना है।

इसलिए जब हम से कहा गया कि यह समितियाँ ठीक प्रकार काम नहीं कर रही हैं तो हमें चिन्ता हुई और हमने राज्य सरकारों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। सब राज्य सरकारों का यही मत है कि यह समितियाँ ठीक तरह काम कर रही हैं और गैर-सरकारी सदस्य कार्यक्रम बनाने और कार्यान्वित करने में बहुत रुचि ले रहे हैं। उन के विचारों से पूरा लाभ उठाया जाता है। राज्य सरकारों ने तो यह भी कहा है कि गैर-सरकारी सदस्यों का मत प्रायः मान लिया जाता है और आन्दोलन की सफलता में भी उनका बड़ा हाथ है। फिर भी, मैं सदन को विश्वास दिलाता हूँ कि हम इस मामले की और अधिक जाँच-पड़ताल करेंगे और इन समितियों को उपयोगी और सक्रिय बनाने की पूरी कोशिश करेंगे।

इन समितियों को आशातीत सफलता प्राप्त न होने के कई कारण हो सकते हैं। इनमें से एक कारण समितियों की रचना भी हो सकता है। माननीय सदस्य जानते ही हैं कि राज्यों की विधान सभाओं के सदस्य इन समितियों का महत्वपूर्ण भाग हैं। सम्भवतः अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण उन लोगों को इन समितियों की कार्रवाइयों में हिस्सा लेने की फ़ुर्सत न मिलती हो। इसलिए कार्यक्रम का अत्यधिक विस्तार हो जाने और संसद् तथा राज्यों की विधान सभाओं के सदस्यों के अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण यह आवश्यक हो गया है कि समितियों की रचना का पुनर्निरीक्षण किया जाए।

आरम्भ में यह उपयुक्त नहीं समझा गया कि इन समितियों की सदस्यता के लिए पंचायतें और सहकारी समितियाँ अपने प्रतिनिधि चुनें। इसलिए इन समितियों के लिए सदस्यों की नामज़दगी का काम कलक्टर को सौंपा गया था। हमारा ख्याल है कि समय आ चुका है कि अब इन समितियों में चुने हुए लोगों को भी स्थान दिया जाए। इसलिए हमने राज्यों की सरकारों के सामने यह सुझाव रखा है कि पंचायतों को इन समितियों के लिए सदस्य चुनने को कहा जाए। जहाँ पंचायतें नहीं हैं, वहाँ विकास मण्डलों जैसी तदर्थ संस्थाओं को अपने प्रतिनिधि भेजने को कहा जाए।

एक माननीय सदस्य ने कहा था कि समितियों के गैर-सरकारी सदस्यों को समितियों की बैठकों में उपस्थित होने और अपना काम ठीक प्रकार करने के लिए उचित सुविधाएँ नहीं दी जातीं। यह बिलकुल आवश्यक है कि सदस्यों को उचित सुविधाएँ (जिनमें भत्ता और रहने की सुविधा भी शामिल है) प्राप्त हों। इसलिए हमने राज्यों की सरकारों को इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने को कहा है।

इन समितियों के काम के बारे में एक शिकायत यह भी है कि सदस्यों को समिति की बैठकों की सूचना काफी पहले नहीं दी जाती। यह वास्तव में काफ़ी आश्चर्य की बात है और हमने

मांग की है कि सदस्यों को पर्याप्त समय पूर्व समिति की बैठकों की सूचना दी जाए।

समितियों के अध्यक्ष के सम्बन्ध में भी काफी मतभेद है। सदस्यों का ख्याल है कि ज़िलाधीश के अध्यक्ष होने के कारण इन समितियों का कार्य सुचारु रूप से नहीं हो पाता। मैं मानता हूँ कि इस समय ज़िलाधीश पर प्रशासिनिक कार्यों का बहुत दबाव रहता है। सम्भवत: इसी कारण वह ज़िले के विकास कार्य के लिए पर्याप्त समय और ध्यान नहीं दे पाता। माननीय सदस्य यह बात सोचें कि आखिर किन कारणों से ज़िलाधीशों को इन समितियों का अध्यक्ष बनाया गया है। मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि इन समितियों के अध्यक्ष के पद पर काम करने के लिए योग्य और अनुभवी गैर-सरकारी लोग नहीं हैं। ऐसे व्यक्ति हैं और मिल भी सकते हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि ज़िलाधीश को अध्यक्ष बनाने के क्या कारण हैं? सबसे पहली समस्या है विभिन्न विभागों में तालमेल बनाने की। क्या एक गैर-सरकारी व्यक्ति को समिति का अध्यक्ष बना कर भी काफ़ी ज़िम्मेदारी के स्तर पर यह विभागीय तालमेल बनाया रखा जा सकता है? जहाँ तक कार्य-सम्पादन और शीघ्र मंजूरी आदि का सम्बन्ध है, यह दोनों गुण तो प्रशासनिक और वित्तीय मामलों में एक ज़िलाधीश से अपेक्षित ही हैं। एक गैर-सरकारी व्यक्ति को समिति का अध्यक्ष बनाना लाभदायक अवश्य होगा परन्तु हमें अन्य मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा।

समस्या का हल ज़िलाधीश को दोषी ठहराने में नहीं बल्कि उसको मुख्य विकास अधिकारी के रूप में और सशक्त बनाने में है। उसके आधीन कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि की जाए ताकि उसके कुछ राजस्व और प्रशासन सम्बन्धी कर्तव्य उनको सौंप दिए जाएँ और ज़िलाधीश अपने आप को मुख्यत: विकास कार्य में लगा सके। सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन इस दशा में कदम उठा चुका है और उसने राज्यों की सरकारों को लिखा है कि ज़िलाधीशों के कुछ प्रशासन और राजस्व सम्बन्धी काम उनसे ले लिए जाएँ ताकि वे सामुदायिक विकास कार्य के लिए पहले से अधिक समय दे सकें।

प्रशिक्षण कार्यक्रम के बारे में भी माननीय सदस्य सन्दिग्ध हैं। उनका ख्याल है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम की बाग-डोर, पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त किए हुए कर्मचारियों के हाथ में नहीं है। इस बात में कोई सन्देह नहीं कि हमारा कार्यक्रम तभी सफल हो सकता है जब हमारे कर्मचारियों का चुनाव सोच-समझ कर किया जाए और उनको पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाए। इस मामले में हमारा सतर्क होना स्वाभाविक ही है। कोई विकास खण्ड आरम्भ करने से पूर्व हम यह देख लेते हैं कि उसके लिए पर्याप्त प्रशिक्षित कर्मचारी उपलब्ध हैं। इनके अभाव में हम उस खण्ड को आरम्भ ही नहीं करते। इसके अतिरिक्त हाल ही में हमने इस सम्बन्ध में कुछ कदम उठाए हैं। एक विशेषज्ञ समिति की नियुक्ति की गई है जो अपनी रिपोर्ट ३-४ महीने में पेश करेगी। मैं मानता हूँ कि ठीक चुनाव करने में हम पूरी होशियारी से काम नहीं ले रहे। जहाँ तक सामाजिक संस्थाओं के लिए ग्राम सेवकों का सम्बन्ध है चुनाव से पूर्व उनकी परीक्षा ली जाती है। प्रशिक्षण के दौरान में भी जो लोग अनुपयुक्त दिखाई पड़ते हैं, निकाल दिए जाते हैं। पूरे मामले की जाँच करके दशा सुधारने के लिए हाल ही में एक समिति की नियुक्ति की गई है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम में पंचायतों और स्थानीय निकायों के महत्व पर माननीय सदस्यों ने ठीक ही ज़ोर दिया है। हम भी पंचायतों और सहकारी समितियों की स्थापना और कार्यक्रम के लिए उनके महत्व पर काफ़ी ज़ोर दे रहे हैं। परन्तु एक कठिनाई जिसका हमें इस समय सामना करना पड़ रहा है, यह है कि स्थानीय निकाय हर स्तर पर अच्छी तरह संगठित अथवा प्रभावशाली नहीं हैं। जहाँ तक पंचायतों का सम्बन्ध है, सदन को यह जान कर खुशी होगी कि हर ग्राम पंचायत को दो हज़ार रुपए तक के किसी काम का आयोजन और कार्यान्वित करने का अधिकार दिया गया है। इन तरीकों से हम स्थानीय निकायों को सशक्त बना रहे हैं, ताकि सामुदायिक विकास कार्यक्रम में वे पूरा योग दे सकें।

★

पंचायतों से काम लीजिए

के० एस० राघवाचारी

मुझे मालूम है कि समय-समय पर हमने रिपोर्टें प्रकाशित की हैं जिनमें हमारे काम का मूल्यांकन किया गया है। लम्बे-चौड़े आँकड़ों से यह साबित करने की कोशिश की जाती है कि देश में काफ़ी प्रशंसनीय कार्य हुआ है। अपने ज़िले और पड़ोसी क्षेत्रों में हुए कार्य को मैंने अच्छी तरह देखा है। अगर यही हमारी महान् सफलता का प्रतीक है तो मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि मुझे अत्यधिक निराशा हुई है।

मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो आलोचना सिर्फ़ आलोचना करने के उद्देश्य से करते हैं। तथ्य तो यह है कि देश प्रगति पुनर्निर्माण और सृजनात्मक कार्यों द्वारा ही कर सकता है। इसे आप चाहें तो सामुदायिक विकास कह लें या इसकी बजाय कोई अंग्रेजी, रूसी या अमेरिकी नाम रख लें। मुझे नाम की चिन्ता नहीं है, मतलब काम से है और हममें से हरेक व्यक्ति काम चाहता है।

काम करने के लिए सरकार व्यक्तियों को चुनकर प्रशिक्षण देती है और प्रशिक्षित व्यक्ति सरकारी अफ़सर बन जाते हैं। अफ़सर ऐसे लोगों को चुना जाता है और प्रशिक्षण दिया जाता है जो इस काम के योग्य नहीं होते। इस अफ़सरशाही का सबसे बड़ा दोष यह है कि बाहर का एक ऐसा व्यक्ति लाकर बिठा दिया जाता है जो मौके पर किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। उसकी एकमात्र चिन्ता यही होती है कि किसी तरह अपने ऊपर के अफ़सरों को सन्तुष्ट कर दूँ। जब वह ऐसा करने में सफल हो जाता है तो वह समझता है कि उसने मोर्चा मार लिया। उसके क्षेत्र में क्या होता है, इससे उसको कोई सरोकार नहीं रहता।

मैं समझता हूँ कि सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्रों और राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्रों में काम करने के लिए जिस संगठन का निर्माण किया गया है वह स्थिति की आवश्यकताओं को देखते हुए सन्तोषजनक नहीं है। इस काम के लिए ग्राम पंचायतों से बढ़कर कोई अन्य संस्था नहीं। उनका जन-सामान्य से भी काफ़ी सम्पर्क रहता है। जब ऐसी संस्थाएँ पहले ही से मौजूद हैं, तो इस काम के लिए नई संस्थाएँ बनाने की क्या आवश्यकता है? इसलिए मेरा सुझाव है कि ग्राम पंचायतों और बहु-उद्देशीय सहकारी समितियों को, जो ग्राम-समाज के जीवन का एक अंग है, इस कार्य को चलाने की ज़िम्मेदारी सौंपी जाए।

●

दिखावा अधिक है, काम कम

रामसुभगसिंह

पहली पंचवर्षीय योजना में ९० करोड़ रुपया सामुदायिक विकास कार्य के लिए रखा गया था। अब दूसरी पंचवर्षीय योजना में करीब २०० करोड़ रुपया इस कार्य के लिए रखा गया है।

वस्तुतः मुझे इस योजना से कोई मतभेद नहीं है और मैं इसका दिल से समर्थन करता हूँ कि हिन्दुस्तान के तमाम गाँवों में इस प्रकार के कार्य किए जाएँ। राष्ट्रीय विकास परिषद् ने सितम्बर सन् ५५ में फ़ैसला किया कि अगली योजना में देश के सभी गाँवों को राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत ले आया जाएगा जिनमें से कम से कम ४० प्रतिशतः खण्डों को सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्रों के रूप में परिणत किया जाएगा। लेकिन सवाल तो यह है कि अब तक जो ९० करोड़ रुपया स्वीकृत किया गया, उसमें से कितने रुपए का सदुपयोग किया गया है?

बजट पर बोलते हुए वित्त मंत्री महोदय ने कहा था कि एक बड़ी उच्च-सत्ता समिति बनेगी जो यह देखेगी कि बड़ी-बड़ी योजनाओं में किस तरह से रुपया खर्च किया जा रहा है। उन्होंने यह भी कहा था कि जो अनेक समितियाँ बनीं उनके बावजूद भी प्रशासनिक व्यय की कोई खास और उचित व्यवस्था नहीं हो पाई है और आगे भी होने की कोई सम्भावना नहीं है। उन्होंने कहा कि आगे आने वाले पाँच वर्षों में अपव्यय बढ़ने की सम्भावना है क्योंकि धन की बरबादी और अपव्यय के बहुत से रास्ते खुल जाएँगे। इसलिए उन्होंने हमें चेतावनी दी कि हमें इस प्रकार के व्यय पर और अधिक निगरानी रखने की आवश्यकता है ताकि राष्ट्रीय संपत्ति का अपव्यय न हो और वह एक सुनियोजित व्यवस्था के अनुसार राष्ट्र निर्माण कार्यों पर खर्च हो। जब ऐसा होगा तभी देश और जनता को अधिकाधिक लाभ पहुँच सकेगा और हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत जो ९० करोड़ रुपए की व्यवस्था थी, वह सारा रुपया अभी तक खर्च नहीं हुआ है और आज ज़रूरत इस बात की है कि हम उसके सम्बन्ध में जाँच करें कि वह रुपया अभी तक क्यों नहीं खर्च हो पाया? यह हो सकता है सभी जगह इस सम्बन्ध में जाँच न की जा सकती हो, लेकिन खास-खास सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्रों में इस बात की जाँच अवश्य होनी चाहिए कि वहाँ पर रुपया पूरा खर्च न किए

जाने का क्या कारण है ? देखना यह है कि एक विकास-योजना क्षेत्र को जो करीब ६६-७० लाख रुपया दिया जाता है, उसमें से कितना रुपया वहाँ के प्रशासन आदि में लगा और कितना रुपया वास्तविक निर्माण कार्यों पर व्यय हुआ। कहा गया है कि इस काम में ६० प्रतिशत के करीब लोगों ने सहायता दी है। लेकिन इसका यह तो मतलब नहीं हुआ कि सभी जगहों पर अच्छा काम हुआ है। यह ६० प्रतिशत तो औसत है। कई जगह ऐसी भी हैं जहाँ बिलकुल काम नहीं हुआ। एक-आध जगह पर थोड़ा बहुत काम हुआ है लेकिन वह भी कोई खास उत्साहजनक नहीं है। ग्रांड ट्रंक रोड सरीखे राज पथों पर ही काम चल रहा है जिनसे कि बड़े-बड़े अफ़सरों को गुज़रना होता है। दूरस्थ गाँवों में काम की किसी को चिन्ता नहीं है।

जहाँ तक कि सलाहकार समिति का सवाल है उसकी बैठक हमेशा कलक्टर और प्रशासक की मर्ज़ी और सुविधा के अनुसार होती है, ग़ैर-सरकारी सदस्यों की सुविधा-असुविधा की तनिक पर्वाह नहीं की जाती। कलक्टर को इनकी बैठक बुलाने की फ़ुर्सत ही बहुत कम मिलती है, जिसका नतीजा यह होता है कि समिति की बैठकें बिलकुल नहीं हो पातीं। मैं तो कहूँगा कि अगर कलक्टर के काम के बारे में जनता को सन्तोष है, कलक्टर का काम उत्साहजनक है, तो उसको उसमें ज़रूर रक्खा जाए। लेकिन यदि उस ज़िले की जनता को कलक्टर के प्रति सन्तोष न हो, तो वहाँ पर कलक्टर को अध्यक्ष रखने से मेरी समझ में कोई लाभ नहीं होगा।

दूसरा सवाल यह है कि मान लीजिए एक सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्र में ६०० गाँव हैं और उनके लिए ६८ लाख रुपया दिया जाता है जिसका मतलब यह हुआ कि मोटे तौर पर एक गाँव का हिस्सा ११ हज़ार रुपए होता है और अगर प्रशासन आदि के लिए एक हज़ार रुपए भी रख लिए जाएँ तो हर गाँव के हिस्से १० हज़ार रुपया आता है। प्रश्न उठता है कि क्या १० हज़ार रुपया उस गाँव पर खर्च किया गया है ? ऐसा नहीं हुआ है। जिनके ज़िम्मे काम कराने का भार होता है वे ज़िम्मेदारी से अपने कर्तव्य को नहीं निभाते। हमारे देखने में आया है कि प्रशासक जाते हैं तो उनका स्वागत होता है जिससे वह अन्दाज़ा लगा लेते हैं कि गाँव में काम अच्छी तरह चल रहा है जब कि हक़ीक़त इसके विपरीत होती है और वे चट से अपनी रिपोर्ट में लिख देते हैं कि गाँव में बहुत अच्छा काम हो रहा है। जहाँ तक इन कामों में जनता के सहयोग को प्राप्त करने का सम्बन्ध है, हमारे अफ़सर वह सहयोग प्राप्त करने में असफल रहे हैं और वे जनता में ज़रूरी जाग्रति पैदा नहीं कर सके हैं ताकि जनता उनको नव निर्माण कार्यों में सक्रिय सहयोग प्रदान करे। केवल सभाओं में भाषण फटकारने से अफ़सरों का कर्त्तव्य पूरा नहीं हो जाता है, बल्कि उनको खुद जनता के बीच जाकर सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और उनकी समस्याओं और कठिनाइयों को समझना चाहिए। खाली ग्राम सेवकों के गाँवों में जाने से और जनता से मिल लेने भर से काम नहीं चलेगा।

●

गाँव-गाँव में जनतन्त्र हो

एस० एस० मोरे

सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम में मेरी बहुत रुचि है क्योंकि मेरा विश्वास है कि यह कार्यक्रम, भारत के ग्रामीण लोगों के जीवन से अन्धकार को मिटाकर, उसके स्थान पर प्रकाश फैलाएगा।

हम किस उद्देश्य को सामने रख कर काम कर रहे हैं ? यह उद्देश्य है सारी प्रशासनिक व्यवस्था का जनतन्त्रीकरण, लोगों को स्वयं अपने भविष्य के निर्माण में भागी बनाना और सामान्य व्यक्ति को अपने जीवन के पुनर्निर्माण का इन्जीनियर तथा अपने भविष्य का निर्माता बनाना। परन्तु इस उद्देश्य में हमें कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई है ? यह प्रश्न काफी महत्वपूर्ण है। क्या हमें जनता का उतना सहयोग मिल रहा है जितना मिलना चाहिए था ? सामुदायिक विकास कार्य के लिए ९० करोड़ रुपए की रकम निर्धारित की गई थी। दुर्भाग्यवश हम पूरी रकम खर्च नहीं कर पाए क्योंकि अधिकतर काम सरकारी अफ़सरों के हाथ में था और आप जानते ही हैं कि सरकारी अफ़सर तो नियमों के गुलाम होते हैं।

दुर्भाग्यवश, इस देश में जिस वस्तु का भी राष्ट्रीयकरण अथवा सामाजीकरण होता है वह वस्तु सरकारी अफ़सरों का इजारा बन कर रह जाती है, क्योंकि लोगों को स्वयं किसी वस्तु की देख-भाल करने की आदत नहीं है।

भारतीय ग्रामीण दरिद्र और अनपढ़ है और अस्वस्थ वातावरण में रहता है। उसकी आत्मा मर चुकी है। हमें उसकी आत्मा को पुनर्जीवित करके उसे इस बात का आभास कराना है कि वह ही अपना भाग्य-विधाता है। ग्रामीणों को एकाध योजना-क्षेत्र दिखाने से या अफ़सरों से मिला कर हम उनका सहयोग

प्राप्त नहीं कर सकते। यह आवश्यक है कि गाँववालों को स्थायी रूप से किसी जनतन्त्रीय संगठन में बाँधा जाए और इस संगठन को कानूनी मान्यता प्राप्त हो। अक्सर यह कहा जाता है कि ग्रामीण अपढ़ हैं, इसलिए उनके गलतियाँ करने की सम्भावना अधिक है। जैसा कि श्री जवाहरलाल नेहरू ने कई बार कहा है, उनको गलतियाँ करने दीजिए और अपनी गलतियों से सबक सीखने दीजिए। इससे वह अपने जीवन में सुधार करने की स्थिति में होगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना शुरू होने वाली है। इसके अन्तर्गत ४८०० करोड़ रुपए व्यय करने की योजना है। हमारा देश तो वैसे ही दरिद्र है। हमारे पास रुपए की ऐसी खानें तो हैं नहीं जिनसे जितना रुपया चाहें निकाल कर इन योजनाओं पर लगा दें। हमारी अमूल्य निधि तो है करोड़ों प्राण और असीम जन-शक्ति जो इस समय बेकार पड़ी हुई है। दुर्भाग्य की बात है कि इस अमूल्य निधि का हम सदुपयोग नहीं कर पाए हैं। इस लिए लोगों को गाँवों में संगठित करके उनकी संस्थाओं को कानूनी मान्यता दी जानी चाहिए। खुद किसानों से पूछिए कि उन्हें कृषि में सुधार करने के लिए किस-किस चीज़ की आवश्यकता है और फिर योजना बनाइए।

इसलिए मेरी सरकार से प्रार्थना है कि हमें गाँवों में ग्रामवासियों को संगठित करने की कोशिश करनी चाहिए, उनका सहयोग प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। जनतन्त्रीय ढंग से संगठित ग्राम समाज राष्ट्र का सबसे शक्तिशाली अंग बन जाएगा। गाँव वालों के लिए यह बात कोई नई नहीं होगी, पुरातन काल से वहाँ ऐसा होता आया है। गाँव में जब पारिवारिक बन्धन समाप्त हो रहे हैं तब ग्राम-समाज को एक सूत्र में किस बन्धन से बाँधा जाएगा? यह बन्धन होगा गाँव का बन्धन, जनतन्त्रीय ढंग से संगठित समाज का बन्धन। यह संगठित समाज अपने हितों की स्वयं रक्षा करने और अपनी समस्याओं को स्वयं हल करने में समर्थ होगा। यह सर्वोत्तम व्यवस्था होगी।

सबसे ऊपरी स्तर पर जनतन्त्र लागू कर देने मात्र से काम नहीं चलेगा। हमें जनतन्त्र को गाँवों में ले जाना होगा। हमें गाँवों को संगठित करना होगा। इसलिए आवश्यक है कि सामुदायिक विकास-योजना प्रशासन इधर-उधर एकाध नलकूप लगवाने की बजाय गाँवों को संगठित करने पर ज़ोर दे। अगर गाँववाले संगठित नहीं होंगे, तो उस नलकूप की देखभाल कौन करेगा।

★

पिछड़े वर्गों को प्राथमिकता दो!

डी० थिम्मैया

इस बात में कोई सन्देह नहीं कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने हमारे ग्रामीण जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। इसके फलस्वरूप किसानों को अनेक सुविधाएँ प्राप्त हो गई हैं। लेकिन मैंने अनुभव किया है कि गाँवों के पिछड़े हुए लोगों को इस कार्यक्रम से कोई सहायता नहीं मिली है। किसानों को ऋण देते समय योजना-क्षेत्र अधिकारी ज़मानत मांगते हैं। बड़े-बड़े भूमि-पति तो ऋण ले सकते हैं परन्तु वे बेचारे ऋण नहीं ले पाते जिनके पास देने को कोई ज़मानत नहीं होती। इसी प्रकार जब उन्नत बीज और खाद बाँटी जाती है तो केवल उन्हीं लोगों के हिस्से में आती है, जिनके पास कुछ भूमि होती है। गाँव के दरिद्र और भूमिहीन लोगों को इनसे कोई लाभ नहीं पहुँचता। इसलिए सारी योजना को इस ढंग से कार्यान्वित किया जाए कि गाँव के दरिद्र और पिछड़े हुए वर्ग की आवश्यकताओं को प्राथमिकता मिले।

अब जब हमने फैसला कर लिया है कि हमारे समाज का रूप समाजवादी होगा, यह और भी आवश्यक हो जाता है कि हम समाज के निर्बल लोगों की ओर विशेष ध्यान दें।

योग्य कर्मचारी ज़रूरी हैं

भक्त दर्शन

इस योजना की वजह से देश के हर गाँव में एक नई जागृति और आशा की किरण पैदा हो गई है। सब जगह बड़े बाँध नहीं बन सकते, सब जगह रेलों की लाइनें नहीं बिछ सकतीं, सब जगह मोटर की बड़ी-बड़ी सड़कें नहीं बन सकतीं हैं, लेकिन सामुदायिक विकास योजना का प्रकाश हर गाँव में पहुँचाया जा सकता है। इसके द्वारा अपने गाँववालों को वह सुख पहुँचा सकते हैं जिसकी हम बहुत दिनों से कल्पना करते रहे हैं।

मैं दो तीन बातों की ओर आप का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। अभी तक जगह-जगह पर जो विकास के काम हो रहे हैं, उन्हें करवाने वाले अधिकांश उच्च अधिकारी आई० सी०एस०या पी० सी० एस० या इसी तरह की अन्य सेवाओं के हैं। मुझे उन की दक्षता में सन्देह नहीं लेकिन जहाँ तक जनता की सेवा करने का सम्बन्ध है, मैं नहीं समझता कि वे इस दिशा में अधिक सफल

[शेष पृष्ठ २४ पर]

हम अधिक सतर्क रहें

रघुबीर सहाय

सामुदायिक विकास कार्यक्रम सम्बन्धी मेरे प्रस्ताव पर लोक सभा में ६ दिसम्बर, १९५५ को जो वादविवाद शुरू हुआ था, २ मार्च १९५६ को समाप्त हो गया। १४ सदस्यों ने इस वादविवाद में भाग लिया। इसके अतिरिक्त योजना उपमंत्री ने भी विस्तृत उत्तर दिया। भाषण देने वाले सदस्यों में देश के हर महत्वपूर्ण दल के सदस्य थे। मोटे तौर पर सभी का दृष्टिकोण एक-सा था और सभी सामुदायिक विकास कार्यक्रम के समर्थक थे।

इस वादविवाद से मैं इन नतीजों पर पहुँचा—

(१) सभी सदस्य देश के सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्रों और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों के काम से पूरी तरह सन्तुष्ट नहीं हैं।

(२) नौकरशाही अधिक है और बुद्धिमान और गैर-सरकारी लोगों के मत और सहयोग को महत्व नहीं दिया जाता।

(३) सलाहकार समितियों का काम सन्तोषजनक नहीं है।

(४) कार्यक्रम के सांस्कृतिक पहलू को महत्व नहीं दिया गया।

(५) सलाहकार समितियों में केवल मनोनीत व्यक्तियों का होना ही काफ़ी नहीं है; कुछ चुने हुए लोगों को भी स्थान दिया जाए।

(६) इस विभाग के अध्यक्ष के रूप में ज़िलाधीश की भी काफ़ी आलोचना की गई।

(७) लोगों में कार्यक्रम के प्रति रुचि और जोश का अभाव है।

सारा वादविवाद सृजनात्मक भावना को लेकर चला। ऐसी दलील नहीं दी गई कि कार्यक्रम का विचार दोषपूर्ण है या यह पूर्णतया असफल रहा है। इस बात पर ज़ोर दिया गया कि हम अधिक सफलता प्राप्त कर सकते थे और कुछ दिशाओं में हमें अपने दृष्टिकोण और तरीकों को बदलना होगा। सदस्यों ने जो कुछ भी कहा, इसलिए कहा कि वे कार्यक्रम के अधिक सफल होने की आशा लगाए हुए थे। उनके निराश होने का कारण यह है कि कार्यक्रम आशातीत रूप से सफल नहीं हुआ। सदन ने इस विषय में जो रुचि दिखाई, उससे तो यही सिद्ध होता है कि यह विषय अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

पूरे वादविवाद का अध्ययन करने के पश्चात् मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि कार्यक्रम को अधिक सफल बनाने के लिए निम्नलिखित परिवर्तन आवश्यक हैं—

(१) सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्रों के प्रशासन में पुनर्गठन की आवश्यकता है।

(२) देश में फैले हुए सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों का इस प्रकार वर्गीकरण किया जाए—

(क) जिनका काम सन्तोषजनक है;

(ख) जिनका काम सामान्य है;

(ग) जहाँ सन्तोषजनक प्रगति नहीं हुई है। (ख) और (ग) के अन्तर्गत आनेवाले खण्डों में सुधार करके उन्हें (क) में कम से कम समय में लाने के लिए कोशिश करनी चाहिए।

(३) दूसरी योजना में सामुदायिक कार्यक्रम के लिए २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इस योजना से प्रत्येक गाँव लाभ उठा सके, इसके लिए आवश्यक है कि इस विशाल काम के लिए एक अलग मन्त्रालय खोला जाए।

(४) सन् १९५३ में शुरू किए गए योजना-क्षेत्रों का कार्यकाल बढ़ा दिया जाए—विशेषकर उनका जिनमें आशातीत सफलता नहीं मिली है।

(५) ऊपर से नीचे तक कर्मचारियों के चुनाव और प्रशिक्षण पर अधिक ध्यान दिया जाए ताकि उनमें काम करने की मिशनरी भावना पैदा हो जाए। इस बात की पूरी कोशिश की जाए कि जिन लोगों को यह काम सौंपा जाए, वह इसको रोज़मर्रा का काम समझ कर न करें। वह इस काम को एक पवित्र काम समझ कर करें क्योंकि इस पर तो हमारे देश का भविष्य निर्भर है।

(६) इस कार्य में अधिक से अधिक गैर-सरकारी सहयोग प्राप्त करने का समय आ गया है। गैर-सरकारी लोगों को प्रोत्साहन दिया जाए और उनके दिल में इस भावना को न जमने दिया जाए कि उनका सुझाव भले ही कितना अच्छा हो, उस पर ध्यान नहीं दिया जाता।

(७) इस काम के व्यापक महत्व को देखते हुए सरकारी और गैर-सरकारी लोगों की एक समिति नियुक्त की जाए जो सदन के सदस्यों द्वारा व्यक्त किए गए मतों की अच्छी तरह खोजबीन करे और इसके आधार पर भावी कार्यक्रम में परिवर्तन सुझाए।

(८) इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आनेवाले ग्राम-वासियों में योजना की भावना पैदा करने के लिए निरन्तर कोशिश की जाए ताकि उस क्षेत्र में चालू काम में तो उनका सहयोग प्राप्त हो ही जाए, साथ ही इस बात का भी आश्वासन मिल जाए कि योजना-काल खत्म हो जाने पर वे स्वयं इस काम को चालू रखेंगे। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक देश के हर गाँव का नक्शा ही बदल जाए और गाँववालों में नया जोश और महत्वाकांक्षा उत्पन्न हो।

भारतीय गाँवों के लिए नए अवसर

क्लिफर्ड एच० विल्सन

अमेरिका में 'सामुदायिक विकास क्षेत्र' नाम की कोई चीज़ नहीं है, इसलिए वहाँ के गाँव वाले शायद इन शब्दों का वास्तविक अर्थ न समझ पाएँ। लेकिन अगर हम 'ग्राम्य विकास कार्यक्रम' शब्द का प्रयोग करें तो लगभग हरेक व्यक्ति इसका तात्पर्य समझ जाएगा। परन्तु अगर कहीं हम उन्हें 'सहकारी विस्तार सेवा' कह कर समझाएँ, तो हर किसान के सामने भारतीय सामुदायिक विकास कार्यक्रम का नक्शा खिंच जाएगा, क्योंकि 'सहकारी विस्तार सेवा' से वे भली-भाँति परिचित हैं और इसकी बदौलत उनकी अवस्था में काफ़ी सुधार हुआ है और हो भी रहा है।

सामुदायिक विकास एक अन्तर्राष्ट्रीय शब्द बन चुका है और यह कार्यक्रम उत्तर और दक्षिण अमेरिका, मध्यपूर्व और दक्षिण-पूर्वी एशिया के अनेक देशों में अपनाया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ भी इस विषय के साहित्य के संकलन तथा विचारों के आदान-प्रदान की व्यवस्था कर रहा है। भारत अपने विचारों और अनुभवों के द्वारा उन देशों को बहुत सहायता पहुँचा रहा है जिनकी अनेक समस्याओं के मूल कारण भारत की तरह पुराने ढर्रे की व्यवस्था, शिक्षा का अभाव और स्वास्थ्य आदि हैं।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम की सबसे महत्वपूर्ण सफलता यह रही है कि इससे विशेष तौर पर गाँववालों में और अन्य लोगों में श्रमदान की भावना उत्पन्न हो गई है। इस सफलता पर भारत गर्व कर सकता है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम ने एक बार फिर यह साबित कर दिया है कि दृढ़ विश्वास और संकल्प से पहाड़ भी हिलाए जा सकते हैं।

प्रगति के हर चरण के साथ अनेक नई समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। एक नए स्कूल की स्थापना और बच्चों तथा प्रौढ़ों की शिक्षा का प्रबन्ध वास्तव में महान् कार्य हैं। परन्तु इनके साथ ही अनेक समस्याओं का जन्म होता है—शैक्षणिक कार्यक्रम तैयार करना, पाठ्य पुस्तकें तैयार करना, अध्यापकों का प्रशिक्षण, इमारतों में सुधार करना—अनेक सिर-दर्द बढ़ जाते हैं। और ज्यों-ज्यों राष्ट्र का शैक्षणिक स्तर ऊँचा होता जाएगा, शिक्षा-सम्बन्धी समस्याएं भी बढ़ती जाएँगी। एक उदाहरण लीजिए—अब अमेरिका के माध्यमिक स्कूलों में पढ़नेवाले छात्रों और छात्राओं को जितनी सुविधाएँ प्राप्त हैं या जितनी उनके लिए आवश्यक समझी जाती हैं, उतनी उनसे चालीस-पचास वर्ष पूर्व के छात्रों को न प्राप्त थीं और न आवश्यक ही समझी जाती थीं। अब पहले से छोटी उम्रवाले बालकों को भौतिक विज्ञान जैसे विषय पढ़ाए जाते हैं। पहले कालेजों में कृषि का जितना व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता था, उससे अधिक अब माध्यमिक स्कूलों से पास होनेवाले छात्रों को मिल जाता है।

सड़कें बनाने का काम सामुदायिक विकास कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग है। सड़कें बनने पर किसान अपनी उपज मंडी तक आसानी से पहुँचा सकता है, गाँव तक डाक्टरी सहायता पहुँच सकती है और रोगियों को अस्पतालों तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। लेकिन ज्यों-ज्यों सड़कों पर यातायात बढ़ेगा, उनकी देख-रेख की भी ज़्यादा ज़रूरत होगी। सड़क-व्यवस्था का आयोजन आवश्यक हो जाता है और इस काम के लिए इंजीनियरों की ज़रूरत पड़ती है। सड़कें बनाने के लिए रोड़ी की ज़रूरत भी होती है। पुल और पुलियों के लिए सीमेंट और इस्पात की ज़रूरत पड़ती है।

एक सीधा-सादा लक्ष्य है कृषि की उपज बढ़ाने की कोशिश करना। अधिक उपज का अर्थ है किसान के पास बेचने के लिए और परिवार चलाने के लिए अधिक खाद्यान्न। पर इस सीधी-सादी बात से भी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। आरम्भ ही में संग्रह की समस्या इसलिए उठ खड़ी होती है कि खाद्यान्न नष्ट होने से बचें। साथ ही उपयुक्त हाट-व्यवस्था का प्रश्न आता है ताकि किसान को अधिक से अधिक दाम मिल सकें। अतिरिक्त उपज को सुरक्षित रखने की योजना और मिलों की स्थापना की ओर भी ध्यान देना पड़ेगा। खेत से पैदा होनेवाले कच्चे माल का उपयोग करने के लिए नए कारखाने बनाना और वर्तमान कारखानों का विस्तार करना आवश्यक हो जाएगा।

स्वास्थ्य में भी सुधार किया जा सकता है। रोगों और उनकी चिकित्सा के सम्बन्ध में संसार की जानकारी बढ़ गई है और बढ़ रही है। शताब्दियों पुरानी बीमारियों को जड़ से उखाड़ा जा रहा है। लेकिन मृत्यु के पंजे से जो लोग बचेंगे उनको ज़िन्दा रखने के लिए खाना देना ज़रूरी है, रोज़गार ज़रूरी है और उनके बच्चों के लिए शिक्षा भी अनिवार्य है। उनको स्वस्थ बनाए रखने के लिए भी पहले से अधिक डाक्टर, अधिक

नर्सें ज़रूरी हैं, पहले से ज़्यादा दवाइयों की ज़रूरत पड़ेगी और उन रोगों के सम्बन्ध में अनुसन्धान ज़रूरी होगा, जिनसे मानव जाति को खतरा लगा रहता है।

किसी व्यक्ति को यह सोचकर भी निराशा हो सकती है कि प्रगति के रास्ते में बड़ी-बड़ी कठिन समस्याएँ हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो बिना सोचे-समझे ऐसी भावना बना लेते हैं और अपने उन साथियों का विरोध करते हैं जो जीवन में सुधार करने पर तुले हुए हैं। ये लोग इस बात को भूल जाते हैं कि स्वयं जनता ही अपने में असीम साधन है। प्रगति के साथ अनेक समस्याएँ तो आ ही खड़ी होती है, लेकिन इन समस्याओं को हल करने के लिए साधनों में भी उल्लेखनीय वृद्धि होती है।

शिक्षा के प्रसार से लोगों को ऐसी वस्तुओं का ज्ञान होता है, जिनका वे अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में इस्तेमाल कर सकते हैं। वे ऐसे-ऐसे हुनर सीखते हैं जिनसे उन्हें रोजी कमाने में आसानी होती है। वे काम करने के नए-नए ढंग खोज निकालते हैं। व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करके वे राष्ट्र की उत्पादन-क्षमता में वृद्धि करते हैं।

बेहतर सड़कों से एकदम ही कई ऐसे लाभ होते हैं जो प्रगति में सहायक होते हैं। लोग स्वयं मण्डियों में जाने लगते हैं और वहाँ वे अपने दैनिक जीवन के लिए आवश्यक चीज़ें खरीद सकते हैं। ४०-५० साल पहले अमेरिकी किसान और उनकी पत्नियाँ पैसा जमा करती थीं ताकि कस्बे जाकर घर के लिए बर्तन या जूते या पहनने के लिए कपड़े खरीद सकें। ज्यों-ज्यों वहाँ किसान का जीवन-स्तर ऊँचा होता गया, वैसे ही वह मशीनें, बिजली के औज़ार, रेडियो, टेलिविज़न आदि भी खरीदने लगा।

स्वास्थ्य में सुधार होने से उत्पादन-क्षमता में भी वृद्धि होती है। बीमार किसान का बीमारी पर तो खर्चा होता ही है, साथ ही उसकी फ़सल भी नहीं कट पाती। स्वस्थ किसान के सामने ऐसी कोई समस्या नहीं होती। इस प्रकार राष्ट्र जहाँ किसान को स्वस्थ बनाए रखने में रुपया व्यय करेगा, साथ ही उसे इस व्यय से कहीं अधिक आर्थिक लाभ भी होंगे।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम का उद्देश्य किसान को स्वतः एक महत्वपूर्ण आर्थिक इकाई बनने का अवसर प्रदान करना है। जब किसान अपने लिए और बेचने के लिए पर्याप्त खाद्यान्न पैदा कर सकेगा, जब वह अपने और अपने परिवार की आवश्यकताएँ पूरी कर सकेगा, जब वह बीमारियों के चंगुल से स्वतन्त्र होगा जो उसकी कार्य-क्षमता के लिए घातक है, और जब उसको इतनी आवश्यक शिक्षा प्राप्त होगी जो उसके लिए ज्ञान के रास्ते खोल दे—तभी उसकी व्यक्तिगत और सामूहिक आवाज़ की राष्ट्र कुछ सुनवाई करेगा।

यही लोकतन्त्र है— स्वच्छन्द मनुष्य अपने पाँवों पर खड़ा हो सकता हो और जो अपनी स्वतन्त्रता का अर्थ समझता हो और उसकी रक्षा करने के लिए और उसे सबल करने के लिए हर प्रकार से तैयार हो। मैं समझता हूँ कि भारतीय किसान एक ऐसा ही नागरिक है--उसे केवल अवसर देने की ज़रूरत है।

प्रायः यह प्रश्न पूछा जाता है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम में—नलकूप लगवाने में, बड़ी-बड़ी नदी घाटी और अन्य योजनाओं में अमेरिका जो भारत की सहायता कर रहा है, इससे अमेरिका को क्या मिलेगा? इसका उत्तर मेरी समझ में यह है कि अमेरिका को वही मिलेगा जो भारत को मिलेगा—भारतीय नागरिकों के जीवन-स्तर में सुधार। जिन लोकतन्त्रीय साधनों से इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कोशिश की जा रही है, अमेरिका का उनमें विश्वास है। इस उद्देश्य की प्राप्ति पर भारत उस संसार को अधिक शक्ति प्रदान कर सकेगा, जिसमें शांति और मानव कल्याण ही प्रमुख लक्ष्य हैं।

मेरी जान-पहचान के एक कृषि-विशेषज्ञ ने, जो आजकल भारत में काम कर रहा है, मुझे एक कहानी सुनाई। एक किसान के खेत में रुई पंक्तियों में बोने और अच्छी किस्म की रुई बोने के लाभों का प्रदर्शन किया जा रहा था। भूमि के दो टुकड़े थे—एक टुकड़े पर सुधरे हुए ढंग से रुई बोई गई थी और दूसरे टुकड़े पर पुराने ढंग से। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया किसान के सामने दोनों तरीकों से रुई बोने का फ़र्क साफ़ होता गया। सुधरे हुए तरीके से जिस टुकड़े पर रुई बोई गई थी, उसकी उपज दूसरे की अपेक्षा कहीं अधिक थी और उससे अच्छी किस्म की भी थी। अमेरिकी विशेषज्ञ ने किसान से इस सम्बन्ध में उसकी राय पूछी। किसान ने एकदम उत्तर दिया—"जब तक रुई को मैं मण्डी में जा बेच नहीं लेता और मुझे दाम नहीं मिल जाते, मैं कुछ नहीं कह सकता!"

कृषि-विशेषज्ञ इस उत्तर से अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इससे किसान की समझदारी टपक रही थी और वह उसी तरह सोच रहा था, जिस तरह एक अच्छे किसान को सोचना चाहिए। किसी भी अमेरिकी किसान से इस उत्तर की आशा की जा सकती है।

★

गाओ ! मेरे मानव ! गाओ !

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

'मत गाओ अब गान'
गाया रोष-युक्त जो कवि ने
मैं न सकूंगा मान

चाहे सम्मुख मृत्यु खड़ी हो
या हो अड़ा विषाद,
नहीं रुदन का काम
दुख हो, सुख हो, सब स्वीकृत कर
करो सहन अविराम

जब तुम कर्म-निरत हो, गाओ
मृदु स्वर या कि कठोर
जब विचार-रत हो तुम, गाओ
जिससे बन जाए चिन्तन-फल
सुन्दर और सशक्त
जब तुम बोलो, कोमल वाणी
जिससे प्राणों में बस जाएं
मधुर तुम्हारे बोल

वर्ष बीतते जाएंगे, पर आएंगे फिर और
ये हैं, मनुज, अनंत !
भाग दौड़ क्यों ? वह कुरूपता
और भूल का मार्ग !
जिधर बढ़ोगे तुम, निश्चित है -
आएंगे ही पद-चिन्हों को देख सहस्र-सहस्र
देख तुम्हारी कर्म-कुशलता उन सबके हित
देख तुम्हारी पावन सेवा-सिद्धि
गूंज उठेंगे उनके अनगिन गीत

गाओ ! मेरे मानव ! गाओ ! मुस्काओ निश्चिन्त
नहीं तुम्हारे जीवन में है
रुदन, रोष का काम

गाओ, करो नये युग का निर्माण
निश्चय होगा जग में अभिनव, मंगलमय सुविहान

[रूपान्तरकार : प्रयागनारायण त्रिपाठी]

हेथू गाँव में श्रमदान द्वारा निर्मित बेसिक स्कूल

ओरमाँझी, राँची और माँडर गाँवों द्वारा आयोजित प्रदर्शनी का एक स्टाल

राँची सामुदायिक विकास-योजना

इक्काडोग गाँव में श्रमदान द्वारा सड़क निर्माण

एक गाँव में भूमिहीनों को भूमि पत्र दिए जा रहे हैं

हेतु का

एक गाँव में बुनकरों का सहकार केन्द्र

ग्रामीण लोगों क

हेथू में लोहार का काम सिखानेवाला एक केन्द्र

त

य

हेथू गाँव में बढ़ई का काम सिखानेवाला केन्द्र

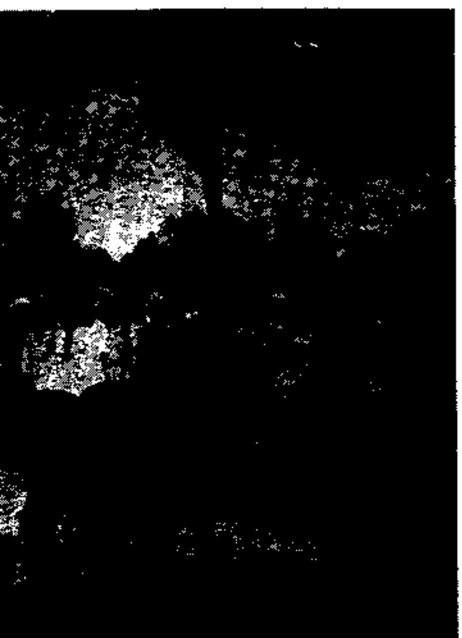

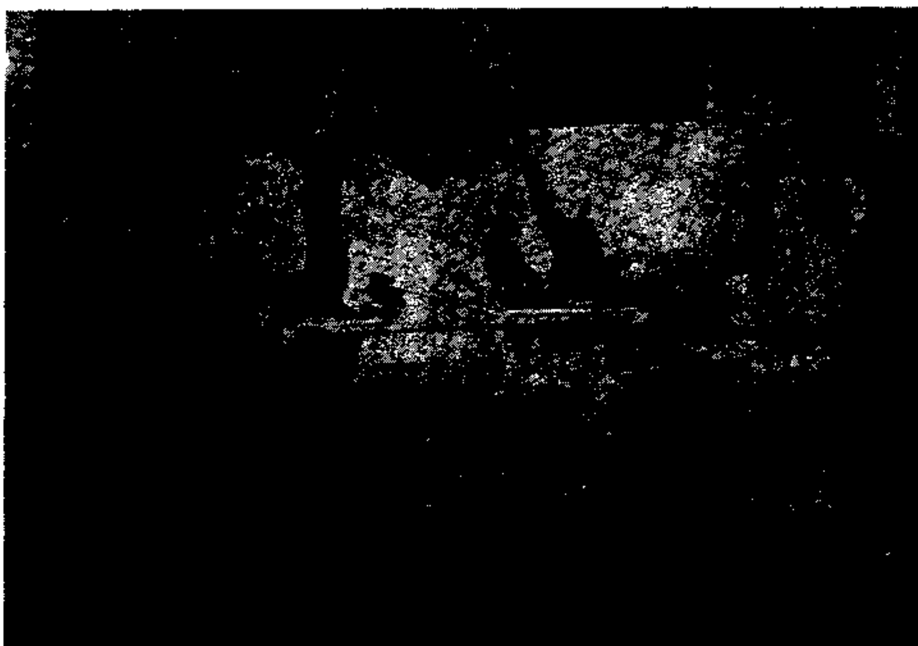

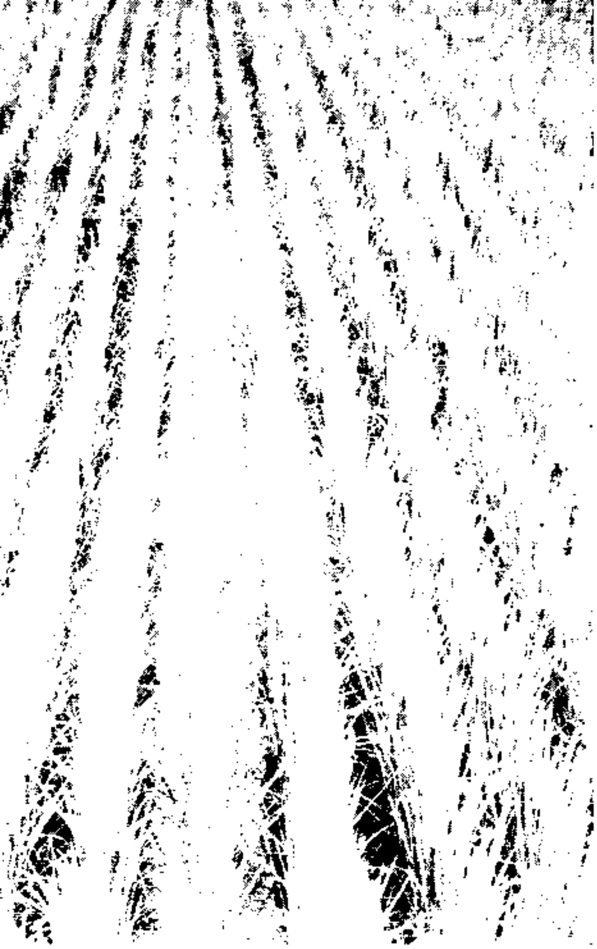

हंथू गाँव में जापानी प्रणाली से बोया गया धान

राँची में ग्राम सेवकों की एक सभा

ी खण्ड के अन्तर्गत एक कढ़ाई बुनाई केन्द्र में आदिवासी बालिकाएँ

राँची खण्ड में सिंचाई के लिए बनाया गया एक बाँध

सामुदायिक विकास के तीन उद्देश्य

के० सन्तानम

किसी ज़ंजीर की मज़बूती उसकी सबसे कमज़ोर कड़ी से आँकी जाती है। इस लिए अगर हम सामुदायिक विकास-योजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं की सफलता का अन्दाज़ा लगाना चाहें, तो हमें सबसे पिछड़े हुए क्षेत्रों के पिछड़े हुए इलाकों का अध्ययन करना चाहिए कि वहाँ कितनी प्रगति हुई है। भारत को लोक-कल्याणकारी राज्य बनाने की दशा में जो प्रयास किया जा रहा है, सामुदायिक विकास-योजनाएँ उसका महत्वपूर्ण अंग हैं। इन योजनाओं को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक है कि हम अपने लक्ष्य के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर लें।

मनुष्य के विकास में तीन प्रकार की शक्तियाँ कामकरती हैं—आर्थिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक। साम्यवादी कहते हैं कि आर्थिक शक्तियाँ सबसे अधिक महत्व रखती हैं। बुद्धिवादी राजनीतिक कारणों को दूसरों से ऊपर समझते हैं और धार्मिक नेताओं को पूरा विश्वास है कि अन्ततः जीत आध्यात्मिक शक्ति की ही होती है। जब मैं सभ्यताओं के विकास और ह्रास, विशाल साम्राज्यों के उत्थान और पतन और पुरातन धर्मों के इतिहास के सम्बन्ध में विचार करता हूँ तो इस नतीजे पर पहुँचता हूँ कि किसी राष्ट्र के स्वस्थ विकास के लिए तीनों शक्तियों का महत्व बराबर है और इनमें से एक की भी उपेक्षा करने से हानि होने की सम्भावना रहती है।

शताब्दियों तक विदेशियों के अधीन रहने के पश्चात् स्वतन्त्र भारत का आरम्भ काफ़ी अच्छा हुआ। महात्मा गान्धी के महान् नेतृत्व में देश को स्वतन्त्रता मिली। गान्धी जी हमेशा आत्मा को सबसे अधिक महत्व देते थे, हालाँ कि उनका मुख्य कार्यक्षेत्र राजनीतिक और आर्थिक ही था। स्वतन्त्रता को दृढ़ बनाने के लिए हमारे बुद्धिमान नेताओं ने शीघ्र एक लोकतान्त्रिक संविधान भी बना लिया, जिसमें व्यक्ति और राष्ट्र दोनों के विकास का उचित प्रबन्ध किया गया है। देश में चारों ओर फैली हुई दरिद्रता, रोगों और अज्ञान को मिटाने के लिए सरकार ने व्यापक आर्थिक विकास की योजना भी बनाई। इस लिए किसी भी खण्ड की सफलता को आँकने के लिए हम जो मापदण्ड बनाएँ उसमें आर्थिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक, तीनों अंगों को उपयुक्त स्थान दिया जाए।

यह स्पष्ट है कि हमारा पहला और प्रमुख उद्देश्य विकास खण्डों के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों का आर्थिक विकास है। जब तक हम गाँवों में रहनेवाली जनता के जीवन-स्तर में सुधार नहीं कर लेते, अन्य समस्याओं की ओर ध्यान ही नहीं दे सकते। लेकिन हमें आर्थिक विकास का ऊपरी मूल्यांकन मात्र ही नहीं करना चाहिए। विकास का वास्तविक मापदण्ड केवल अधिक उत्पादन ही नहीं है, क्योंकि केवल अस्थायी कारणों से भी (जैसे अच्छी वर्षा आदि) अधिक उत्पादन हो सकता है। वास्तविक आर्थिक प्रगति तो तभी होती है जब राष्ट्र की उत्पादन-क्षमता में वृद्धि हो। उत्पादन-क्षमता अधिक काम करने से, अच्छे औज़ार इस्तेमाल करने से और हर प्रकार की वस्तुओं के उत्पादन, बिक्री और उपभोग में वैज्ञानिक पद्धति को अधिकाधिक अपनाने से ही बढ़ सकती है। आप किसान को अच्छी किस्म के बीज इस्तेमाल करने को देते हैं। इसका प्रभाव एकाध फसल तक ही रहेगा—पूर्णतया सीमित और अस्थायी होगा जब तक अच्छे बीजों से प्राप्त होनेवाले लाभों से प्रभावित होकर किसान के दिल में स्वयं वैसे बीज पैदा करने की इच्छा पैदा नहीं होती। अगर वह अकेला यह कार्य नहीं कर सकता तो इस काम के लिए सहकारी संस्थाओं की स्थापना में योग दे, तभी इस प्रगतिशील कार्य का प्रभाव स्थायी होगा। यह भी सब को भली भाँति विदित है कि सुधरे हुए औज़ारों और सुधरे हुए तरीके से खेती करना आवश्यक है। परन्तु साथ ही यह भी सच है कि छोटे-छोटे खेतों पर इनका प्रयोग लगभग असम्भव है और भारत में अधिकतर किसानों के पास अपर्याप्त भूमि है। हमारा संविधान लोकतांत्रिक है। इसलिए हम किसानों पर चकबन्दी के लिए किसी प्रकार का दबाव नहीं डाल सकते। इसी कारण हम बड़े-बड़े सरकारी फार्मों और सहकारी फार्मों की स्थापना नहीं कर पाए। हमारी सफलता तो किसानों को समझा-बुझा कर उनमें सहकारिता का प्रचार करने में है। जितना ही यह आन्दोलन हमारे किसानों में लोकप्रिय होता जाएगा, हमें अपने कृषि-सम्बन्धी उद्देश्यों में उतनी ही सफलतामिलेगी।

लेकिन यह भी नहीं भूलना चाहिए कि अधिक उत्पादन आर्थिक उन्नति का एक अंश मात्र है। सदुपयोग और सुव्यवस्थित बचत के अभाव में उत्पादन में वृद्धि हो जाने पर जीवन के

अव्यवस्थित हो जाने की आशंका रहती है। धन में वृद्धि होने से तब तक कोई लाभ नहीं, जब तक जन-सामान्य के स्वास्थ्य में, कपड़ों में और घरों में सुधार नहीं होता। जब तक वे भविष्य की चिन्ता से स्वतन्त्र होकर अपने जीवन में अधिक आनन्द नहीं लेने लगते।

सामुदायिक विकास का दूसरा उद्देश्य जनता में राजनीतिक चेतना पैदा करना है। इसका अर्थ यह नहीं कि विकास खण्डों के कार्यकर्त्ता और व्यवस्थापक खुद राजनीतिक गुटबन्दी में भाग लेने लगें। 'राजनीतिक' शब्द को यहाँ मोटे अर्थों में इस्तेमाल किया गया है। इसका अर्थ यह है कि किसी निश्चय पर पहुँचने से पहले उस पर मिल-बैठ कर विचार-विमर्श किया जाए और जब सोच-समझ कर बहुमत से कोई निर्णय किया जाए, तो अल्पमत वाले लोग बहुमत के निर्णय का विरोध करने की बजाय उसको कार्यान्वित करने में उनका पूरा साथ दें। अगर विकास अधिकारियों या ग्राम सेवक ने किसानों पर किसी प्रकार का दबाव डाल कर उनसे कोई काम करवाया, तो उससे कोई लाभ नहीं। किसान तो इस सुधार के बावजूद भी पहले ही की तरह अज्ञानी रहेगा। किसान में किसी बात को समझने की बुद्धि पैदा करनी चाहिए, वह अपने संशय सामने रखे, प्रश्न करे और अपने अनुभव के आधार पर स्वयं परिणाम निकाले। इसके लिए अत्यधिक धैर्य की आवश्यकता है। इसका जो भी परिणाम होगा वह धीरे-धीरे ही होगा परन्तु होगा अधिक स्थायी और सन्तोषजनक। संविधान बना देने से या नियत समय पर नए चुनाव कर देने मात्र से भारतीय लोकतंत्र नहीं पनप सकता। इसके लिए यह आवश्यक है कि देश के हर कोने में लोकतान्त्रिक भावना का प्रसार हो। ग्राम पंचायतों, सहकारी समितियों की कार्यवाइयों और अन्य समितियों और बैठकों में विचार-विनिमय लोकतान्त्रिक ढंग से हो।

तीसरा उद्देश्य आध्यात्मिक है। यह उद्देश्य सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, परन्तु इसकी व्याख्या या विवरण करना अत्यधिक कठिन है। इसका किसी वर्ग के धर्म, जाति या विश्वास से कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरे मतानुसार आध्यात्मिक शब्द में सहानुभूति, दुखी व्यक्ति का दुख दूर करने की इच्छा, प्रतिकूल परिस्थिति में दृढ़ता, सात्विकता और निस्स्वार्थ समाज सेवा की भावना आदि गुण निहित हैं। इन्हीं गुणों के कारण ही किसी व्यक्ति के चरित्र अथवा व्यक्तित्व को महान् कहा जा सकता है। इन गुणों का निरूपण कोई ठोस कार्यक्रम आरम्भ करके नहीं किया जा सकता। सौभाग्यवश इनमें से कई तत्व सांस्कृतिक परम्पराओं के फलस्वरूप हमारी जनता में अब भी विद्यमान हैं। बस आवश्यकता इस बात की है कि सामुदायिक विकास कार्यकर्त्ता इन गुणों के अपार महत्व को जानें और उनको प्रोत्साहन देने की पूरी कोशिश करें।

देश के विभिन्न क्षेत्रों में कई प्रकार की समस्याएँ हैं। पुरातन पद्धति, कम उपज, सड़कों का अभाव, मौसमी बेकारी, रोग, गन्दगी, अपर्याप्त पोषण और पीने के पानी का अभाव देश के हर कोने में है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि सामुदायिक विकास कार्य का एक व्यापक रूप हो, परन्तु साथ ही इस बात का भी ख्याल रखा जाए कि इस व्यापक रूप में किसी विकास खण्ड की स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए परिवर्तन करने में कोई हिचक न हो। ऐसे क्षेत्र में जहाँ अधिकतर लोग अशिक्षित और अनपढ़ हैं, पुस्तकालयों की स्थापना करने या प्रौढ़ों को शिक्षा देने का प्रबन्ध करने से अच्छा यही होगा कि बुनियादी शिक्षा की नींव डालें। किसी क्षेत्र में कच्ची सड़क बनाते समय हमें वहाँ की मिट्टी की ओर भी ध्यान देना होगा। सभी क्षेत्रों में कच्ची सड़कों का एक-सा उपयोग नहीं है। इसलिए विकास अधिकारियों को जहाँ व्यापक योजना को कार्यान्वित करने के लिए कोशिश करनी चाहिए, उन्हें हर खण्ड के लिए विशिष्ट कार्यक्रम निर्धारित करने की ओर भी ध्यान देना चाहिए। अतः एक खण्ड में फलों की बाग़बानी को प्रोत्साहन दिया जाए तो दूसरे में सब्ज़ियाँ उगाने पर ज़ोर दिया जाए, एक में पशु नस्ल-सुधार पर ज़ोर दें तो दूसरे में मुर्गियां पालने को विशेष महत्व दिया जाए। इससे हमारे आर्थिक विकास का ढाँचा ही विस्तृत नहीं होगा, साथ-साथ विकास अधिकारियों और ग्राम सेवकों को अपनी दक्षता दिखाने का पूरा मौका मिलेगा।

एक भूल अक्सर यह होती है कि हम किसी खण्ड की प्रगति का अन्दाज़ा लगाते समय उसकी तुलना अखिल भारतीय प्रगति से कर बैठते हैं। इस प्रगति को आँकने का सीधा-सादा तरीका यह है कि हम देखें कि जिस समय उस खण्ड में काम शुरू किया गया था, वहाँ की आर्थिक स्थिति कैसी थी और अब इतने समय पश्चात् कैसी है। उस खण्ड की पूर्व स्थिति और अब की स्थिति की तुलना करके ही हम उस खण्ड में हुए काम का अन्दाज़ा लगा सकते हैं, न कि उसकी तुलना किसी और खण्ड में हुए काम से करके। सीधी-सी बात है कि जितने पिछड़े हुए लोग होंगे उतना ही कठिन होगा उनसे विकास कार्य के लिए धन, श्रम आदि का प्राप्त करना या उनको सहकारी समितियों द्वारा काम के लिए प्रोत्साहित करना। इस लिए दरिद्र लोगों को विकास कार्य के प्रति उदासीन पाकर उनको बुरा-भला कह देने से कुछ नहीं बनेगा। हमें निरन्तर विश्वास के साथ तब तक प्रयास करना होगा, जब तक हम अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर लेते।

★

पहाड़ हिलाए जा सकते हैं

एच० आर० मखीजा

विकास-योजना कर्मचारियों की उस पाक्षिक बैठक में प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर निराशा झलक रही थी। इस निराशा के पीछे असफलता की एक लम्बी कहानी थी। प्रत्येक व्यक्ति की ज़बान पर विकास खण्ड के एक छोर पर बसे हुए कुछ गाँवों का नाम था। बैठक में चर्चा का विषय यही गाँव थे। वैसे तो इस खण्ड के सभी लोग बहुत पिछड़े हुए और सुस्त थे; श्रम और आत्म-निर्भरता के लाभों का ज्ञान उन्हें बहुत धीरे-धीरे हो रहा था, लेकिन उपर्युक्त गाँवों के लोग तो शेष गाँववालों की अपेक्षा कहीं अधिक पिछड़े हुए थे। ये लोग योजना कर्मचारियों की इस बात से भी असहमत थे कि उनके जीवन में किसी प्रकार की प्रगति की आवश्यकता है। उन्हें अपने ज़िन्दा रहने मात्र से ही सन्तोष था—आगे बढ़ने और अपने जीवन को सुधारने की इच्छा तो उनमें थी ही नहीं। उनका जीवन बस भाग्य के सहारे चल रहा था। नए विचारों और नए तरीकों का उन पर कोई असर नहीं होता था। सबसे दुखदायी बात तो यह थी कि वे लोग योजना कर्मचारियों को सन्देह की दृष्टि से देखा करते थे। प्रगति की बात करने वाला व्यक्ति उनके उपहास का पात्र बन जाता था। सोच समझ कर वे लोग इस नतीजे पर पहुँचे थे कि यह आन्दोलन सरकार ने किसी अच्छी नियत से शुरू नहीं किया है और गाँव वालों की भलाई इससे बच के रहने में है।

बैठक में उपस्थित व्यक्तियों में सबसे अधिक दुखी और निराश ग्राम सेवक था। ९ महीने तक लगातार परिश्रम करने पर भी वह गाँववालों को जगाने में सफल नहीं हुआ था। वह इस परिणाम पर पहुँचा था कि इन गाँवों को उनके भाग्य पर ही छोड़ देना ठीक होगा। उसने प्रार्थना की थी कि उसे किसी और खण्ड में बदल दिया जाए ताकि वह कुछ काम करके दिखा सके। ज़िलाधीश महोदय, जो पुरानी नौकरशाही सरकार की भी नौकरी कर चुके थे, अपने पुराने प्रभाव से पूर्णतया मुक्त नहीं हो पाए थे। उन्होंने सुझाया कि इन लोगों को जो समझाने-बुझाने से रास्ते पर नहीं आए, दबाव डाल कर ठीक किया जाए। खण्ड विकास अधिकारी प्रदीप ज़िलाधीश से सहमत नहीं थे। उनके सुझाव में जो संकट निहित थे, वे प्रदीप से छुपे नहीं थे। प्रदीप के कानों में अब भी प्रधान मन्त्री के ये शब्द गूँज रहे थे—"मकान भले ही अच्छा हो, लेकिन असली महत्व मकान का नहीं, मकान बनानेवाले का है......।" उसे सब कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा था—उसका लक्ष्य उसके सामने था। वह बोला—"मैं समझता हूँ कि यह तरीका हमारे आन्दोलन के मूल सिद्धान्तों के विरुद्ध है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम तो जनता का कार्यक्रम है जिसे सरकारी सहयोग से चलाया जा रहा है। उसमें किसी प्रकार के दबाव के लिए कोई स्थान नहीं है। मेरे विचार में, लक्ष्य से अधिक नहीं तो कम से कम उतना महत्व साधनों का भी है। समझाने-बुझाने के अलावा हमारे पास कोई रास्ता नहीं है---भले ही यह कारगर देर में हो परन्तु इसका प्रभाव अधिक समय तक रहता है। उन पर दबाव डालने से अच्छा तो यही है कि हम ज़रूरत पड़ने पर महीनों, सालों और शताब्दियों तक सिर्फ़ इन्तज़ार ही करते रहें।"

बैठक अब समाप्त हो गई। लोगों का कोई प्रतिनिधि इस बैठक में नहीं था क्योंकि उन्हें इस कार्य-क्रम में कोई रुचि नहीं थी।

प्रदीप की आत्मा पवित्र थी और उसमें अडिग विश्वास था। उसका मनुष्य की श्रेष्ठता में भी विश्वास था। मनुष्य की सुप्त श्रेष्ठता को जगाने के लिए वह प्रयास और प्रतीक्षा करने को तैयार था। असफलता और पराजय का भेद वह अच्छी तरह जानता था—वह असफल हो सकता था लेकिन हार मानने को तैयार नहीं था। पराजय को वह विजय की बुनियाद समझता था। प्रदीप किसी विद्वान की इस उक्ति में विश्वास रखता था कि—"अगर संकल्प और विश्वास हो तो पहाड़ों को भी हिलाया जा सकता है।" चारों ओर छाए हुए गहन अन्धकार में भी उसे प्रकाश नज़र आ रहा था—यह प्रकाश कहाँ से आ रहा था, उसे मालूम नहीं था। उसको मार्ग नहीं सूझ रहा था, लेकिन उसका संकल्प दृढ़ था।

प्रदीप बैठा हुआ इस समस्या का हल ढूँढ रहा था—समस्या जो अब तक कई बार लगातार कोशिश करने पर भी हल नहीं हो पाई थी। वह चाहता था कि किसी तरह गाँववाले यह अनुभव करने लगें कि शताब्दियों के शोषण और उपेक्षा के कारण उन्हें कितनी क्षति पहुँची है। किसी तरह उनमें अपना जीवन सुधारने की महत्वाकांक्षा पैदा हो जाए। वह भावना उत्पन्न होने के बाद उनसे काम करवाना सरल हो जाएगा। उसकी बुद्धि, उसकी आत्मा और उसका कण-कण इसी चिन्ता में निमग्न था—किस तरह वह इन लोगों के हृदय में उनकी आधुनिक अवस्था के प्रति असन्तोष उत्पन्न कर सकता है। असन्तोष पैदा हो जाए—फिर उनसे श्रमदान करवाना मुश्किल नहीं था। उसकी आकांक्षा थी कि इन गाँवों के लोग भी अन्य देशवासियों के साथ कन्धा से कन्धा मिलाकर देश के नव-निर्माण में सहयोग दें।

प्रदीप ने कई दिन और रातें इसी सोच में बिता दीं। उसने उन लोगों की आदतों और रहने-सहने के ढंग का निकट से अध्ययन किया।

गाँव के लोग रोज़ दो बार गाँव के मन्दिर में जाया करते थे। वहाँ वे गीता, रामायण, और महाभारत की कथाएँ बड़े प्रेम से सुनते थे। उसने अपने से यह प्रश्न पूछा—"ऐसे लोगों की मन्दिरों और धार्मिक ग्रन्थों में आस्था क्यों है? क्या ये सब वे इसलिए करते हैं कि उनके सब पाप धुल जाएँ? या आत्म-विश्वास के अभाव में वे अपने आप को इतना निर्बल अनुभव करते हैं कि अकेले बुराइयों, रोगों और प्राकृतिक सकटों का सामना करने का साहस नहीं रखते, इसलिए इन क्रूर शक्तियों से बचे रहने के लिए दैवी शक्तियों की शरण लेते हैं? और केवल मन्दिर में आकर ही वे सन्तुष्ट क्यों हो जाते हैं, धार्मिक नियमों को अपने जीवन पर लागू करने की कोशिश क्यों नहीं करते? इस प्रश्न का उत्तर भले ही कुछ हो, परन्तु बार-बार न जाने क्यों, उसे यह महसूस होता था कि गाँववालों की इस कमज़ोरी, उनकी अन्धी आस्था से वह लाभ उठा सकता है।

प्रदीप स्वयं भी धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति था। वह रोज़ गीता का पाठ करता था और अन्य ग्रामवासियों के विपरीत गीता के उपदेशों पर अमल करता था। एक दिन प्रातःकाल गीता पढ़ते समय उसकी आँख एक श्लोक पर टिक गई। अचानक उसका मुख आशा से चमक उठा। यह श्लोक गाँववालों की नींद भंग कर सकता है—उसे ऐसा महसूस हुआ। लेकिन इसके लिए आवश्यक था कि जो व्यक्ति इस श्लोक का अर्थ उनको समझाए, उसके शब्दों में बल हो।

प्रदीप एक संन्यासी को जानता था जो खण्ड के प्रधान कार्यालय से लगभग सौ मील की दूरी पर रहते थे। उनकी आत्मा बहुत पवित्र थी। एम० ए० पास करने के बाद उन्होंने वेदान्त का अध्ययन करने के लिए बीस वर्ष की उम्र में ही संन्यास ले लिया था। वे विद्वत्ता की जीती-जागती मूर्ति थे। प्रदीप उनके पास पहुँचा। उसने अपनी समस्या उनके सामने रखी और उसका हल भी बताया और बोला—"स्वामी जी, अगर आप गाँववालों को अपने दर्शन देकर उपदेश देने की कृपा करें, तो उनका कल्याण हो जाए।" स्वामी जी सहमत हो गए और उनके आने का एक दिन भी निश्चित कर लिया गया।

प्रदीप जब लौटा तो बहुत प्रसन्न और सन्तुष्ट था। अपने सहयोगियों को बुलाकर उसने सब कुछ समझाया। कुछ सह-योगी अब भी सन्दिग्ध थे—निरन्तर असफलताओं के कारण ऐसा होना स्वाभाविक ही था। लेकिन कोशिश करने में कोई हर्ज नहीं था। समाज शिक्षा संयोजक और ग्राम सेवक दोनों को इस चीज़ की ज़िम्मेदारी सौंपी गई कि वे स्वामी जी के आगमन का प्रचार इस ढंग से करें कि लोगों को सपने में भी इस बात का ख्याल न हो कि इसमें योजना कर्मचारियों का हाथ है।

स्वामी जी नियत समय पर पहुँच गए। आस-पास के गाँवों से भी लोग वहाँ पहुँचे। भीड़ आशा से भी अधिक हो गई थी। आरम्भ में स्वामी जी के सम्मान में भाषण दिए गए। योजना कर्मचारी जानबूझ कर पीछे-पीछे रहे।

स्वामी जी ने नम्र स्वर में अपना उपदेश शुरू किया—"आप लोग गीता में बेहद आस्था रखते हैं। आज भी आप से गीता ही के एक श्लोक के सम्बन्ध में बात-चीत करूँगा। वह श्लोक है—

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥

[तुम लोग इस यज्ञ द्वारा देवताओं की उपासना करो और देवता लोग तुम्हारी उन्नति करें। इस प्रकार आपस में

एक दूसरे के प्रति श्रद्धा रखते हुए हम सब कल्याण को प्राप्त होवें।]

"क्या उपस्थित व्यक्तियों में से कोई इस श्लोक का वास्तविक अर्थ जानता है? सारे श्लोक को छोड़िए, यह बताइए कि आप में से कोई यह भी जानता है कि देव क्या होते हैं?"

स्वामी जी एक क्षण रुके। उपस्थित लोग खामोश थे। देव क्या हैं, इस बारे में उनकी कुछ अनिश्चित धारणाएँ थीं और उनके लिए बस इतना ही काफ़ी था। परन्तु स्वामी जी को समझाना तो बहुत मुश्किल था। अन्त में एक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ और पास के मन्दिर की ओर संकेत करते हुए बोला—"मंदिर की मूर्तियाँ देव हैं।"

एक और व्यक्ति बोला—"देव दैवी जीव हैं जिनके पास दैवी शक्ति होती है।"

स्वामी जी का दूसरा प्रश्न था—"उनकी स्तुति किस प्रकार करनी चाहिए?"

एक अन्य व्यक्ति ने उत्तर दिया—"उनकी पूजा करने का ढंग तो साफ़ है। हम लोग मन्दिर में जाकर देवों के आगे श्रद्धा से मस्तक नवाते हैं, उनको फल-फूल और मिठाइयाँ भेंट करते हैं। इस प्रकार हम उनकी पूजा करते हैं।"

"उत्तर अच्छा है। लेकिन हम उनकी पूजा करें क्यों?" स्वामी जी ने एक और प्रश्न किया।

स्वामी जी के उपदेश देने के विचित्र ढंग से श्रोतागण हैरान हो गए। फिर भी उन्हें इस बौद्धिक व्यायाम में आनन्द आ रहा था। उनको इस बात से भी प्रोत्साहन मिला कि स्वामी जी ने इससे पूर्व के प्रश्न के उत्तर को मान लिया था।

"स्वामी जी, आप जानते ही हैं कि देवों में हमें अच्छी और बुरी चीज़ें देने की शक्ति है। हम उनकी पूजा इसलिए करते हैं कि वे हमें अच्छी वस्तुएँ दें और बुरी बातों से बचाए रखें," एक व्यक्ति ने उत्तर दिया।

"ठीक! बिलकुल ठीक!" स्वामी जी ने मुस्कराते हुए कहा – "अब आप यह बताएँ कि देवों को, जो हमें अच्छी चीज़ें देते हैं, हम बदले में क्या देते हैं?"

प्रश्न कठिन था। कुछ विराम के पश्चात् एक व्यक्ति झिझकता हुआ बोला –"कुछ नहीं, हम उन्हें दे ही क्या सकते हैं। हम लोग तो बहुत दरिद्र और कमज़ोर हैं।"

स्वामी जी इस उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुए।

एक अन्य व्यक्ति ने साहस किया—"हम उनकी स्तुति करते हैं; हम उनको फलफूल, मिठाइयाँ और अन्य चीज़ें चढ़ाते हैं।"

पर यह उत्तर भी स्वामी जी को सन्तुष्ट न कर सका। अन्य किसी व्यक्ति ने बोलने का साहस नहीं किया। तब स्वामी जी ने स्वयं बोलना आरंभ किया—"अगर हमें इस प्रश्न का उत्तर मिल जाए, तो समझ लीजिए कि हमने उस श्लोक का अर्थ समझ लिया। यही नहीं, हमें यह भी अच्छी तरह पता लग जाएगा कि 'देव' का क्या अर्थ होता है और उनकी क्यों और कैसे पूजा की जाए?"

श्रोतागण ध्यान से स्वामी जी की बात सुन रहे थे। स्वामी जी ने बोलना जारी रखा—"मैं मानता हूँ कि देव वे हैं जो देते हैं। इसी अर्थ में हम सूर्य, पृथ्वी, नदियों, समुद्रों और पर्वतों को देव मानते हैं। इन सबसे हमें अनेक सुख-सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। सच तो यह है कि अगर ये देव हमें अपने प्रसादों से वंचित कर दें तो हमारा जीवन भी असम्भव हो जाए। लेकिन उनके अनेक प्रसादों के बदले हम उन्हें क्या देते हैं? हम उनकी कितनी पूजा करते हैं?

"पृथ्वी ही को लीजिए। गाँव की भूमि इस विशाल पृथ्वी का एक छोटा-सा अंग है। न जाने कितनी शताब्दियों से एक देवी की तरह यह हर वर्ष आपको खाद्यान्न और अन्य आवश्यक वस्तुएँ देती आई है। इसके बावजूद आप लोगों ने इस देवी को बदले में क्या दिया? पानी नहीं दिया और न ही खाद जैसी बेकार चीज़ भी दी जो आपके गाँव और घरों में गन्दगी करती है। आप भूमि को भूखा रखकर खुद भरपेट नहीं खा सकते—आपके भूखा रहने का यही कारण है। इस श्लोक का असली अर्थ यह है कि आप देवी भूमि की सेवा-अर्चना अच्छी तरह हल जोत कर, अच्छी खाद इस्तेमाल करके, अच्छी प्रकार सिंचाई करके और अच्छे बीज इस्तेमाल करके कर सकते हैं। इसके फलस्वरूप देवी, अच्छी फसल के रूप में आपको अपना प्रसाद देगी।"

यह बात सुन कर श्रोतागण रोमांचित हो उठे। स्वामी जी ने क्षण भर बाद फिर बोलना आरम्भ किया—"पशुओं का भी यही हाल है। हमारे पशु संसार के अन्य देशों के पशुओं की अपेक्षा बहुत दुर्बल हैं और वे दूध भी उनकी अपेक्षा बहुत कम देते हैं। इसी लिए हमारे देश में दूध और दूध से बने हुए पदार्थों की औसत खपत शायद संसार में सब से कम है। इस शोचनीय अवस्था का कारण भी यही है। आप उनको पूरी खुराक नहीं देते और उनकी सुख-सुविधा का ख्याल नहीं रखते। तभी तो वे हमें पर्याप्त दूध नहीं देते और न ही हमारी खेती की अच्छी तरह जुताई करते हैं।"

जीवन में पहली बार गाँववालों को 'देव' शब्द के अर्थ का आभास हुआ था। उन्होंने अनुभव किया कि उनका देवों से क्या सम्बन्ध है। स्वामी जी की बातों में उनकी रुचि बढ़ती गई।

"एक और देव है पर्वत। पर्वतों के जंगलों के पेड़ों को काट कर हम लकड़ी इस्तेमाल करते हैं—लेकिन क्या कभी आपने नए वृक्ष लगाने की तरफ ध्यान दिया? आप के पशु जंगलों में घूमते हुए वहाँ की हरियाली चर जाते हैं। क्या इस प्रकार आप देवों को नहीं लूटते? और इस सब का क्या नतीजा निकलता है? वर्षा नहीं होती, बाढ़ आती है और भूमि में कटाव पैदा हो जाता है।

"ऐसे हज़ारों दृष्टान्त हैं—आप स्वयं सोचें तो कितने ही ऐसे उदाहरण आपको मिल जाएँगे। मुझे पूरा विश्वास है कि अगर आप मेरे बताए हुए तरीके से देवों की आराधना करेंगे तो देव आप पर हर दैवी प्रसाद न्योछावर करेंगे। जितना आप किसी दूसरे व्यक्ति से प्राप्त करते हैं या प्राप्त करने की आशा करते है आप उसको उससे अधिक दें। जब आप इस नियम का पालन करने लगेंगे तो आपका गाँव स्वर्ग बन जाएगा और आप मनुष्य नहीं देवता बन जाएँगे। अगर इस देश का हर व्यक्ति इस श्लोक की भावना को अपने हृदय में स्थान देकर काम करेगा तो देश से दरिद्रता, अज्ञान और रोगों का नामो-निशान मिट जाएगा और हमारा देश स्वर्ग बन जाएगा। इस देशमें दूध-घी की नदियाँ बहने लगेंगी।"

यहाँ आकर स्वामी जी ने अपना उपदेश समाप्त किया। लोगों में पूरी खामोशी थी। कुछ देर बाद उनमें कानाफूसी होने लगी। फिर भीड़ में से एक व्यक्ति उठा। उसकी आँखों में खुशी के आँसु थे और मुख उत्साह से चमक रहा था। वह बोला—"स्वामी जी, हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं। आपने हमारी आँखें खोल दी हैं। समाज और अपने प्रति हमारा क्या दायित्व है, अब हमें अच्छी तरह मालूम हो गया।"

अब वे स्वयं ही योजना कर्मचारियों के पास सलाह लेने आने लगे। अपने और समाज के पुनर्निर्माण के जहाद में वे कूद पड़े। उनका आदर्श वाक्य था—"बाहु-बल से इसे किया जा सकता है।"

केवल डेढ़ साल में इन गाँवों का नक्शा ही बदल गया है। इन गाँवों को अब पहचानना भी मुश्किल है। अब वहाँ फसलें अच्छी होती है, पशु-धन पहले से कहीं अधिक स्वस्थ हैं, गाँववाले मुर्गियाँ पालने लगे हैं। गाँव के कुओं पर पक्की जोतें बनाई जा चुकी हैं। गाँववालों का नया जीवन शुरू हो चुका है।

लेकिन प्रगति के रास्ता का कोई अन्त नहीं—यह यात्रा अब भी जारी है।

★

योग्य कर्मचारी जरूरी हैं—[पृष्ठ १० का शेषांश]

हो सकते हैं। इस बारे में मेरा सुझाव यह है कि जिन सार्वजनिक सेवकों ने अपना सारा जीवन गाँवों की सेवा में व्यतीत किया है, जो खेती के काम में या दूसरे प्रकार के सार्वजनिक कामों में कुछ अनुभव रखते हैं, अगर उनमें से शिक्षित व्यक्ति मिल सकते हों तो उन्हें इस कार्य के लिए लिया जाए। कुछ दिन हुए मैंने समाचार-पत्रों में पढ़ा था कि शायद सरकार की मंशा है कि एक ऑल इंडिया डेवेलपमैंट सर्विस या इसी तरह की कोई दूसरी सर्विस आरम्भ की जाए। मुझे पूरी जानकारी नहीं है कि इस विषय में कितनी प्रगति हुई है, लेकिन अगर यह विचार किया जा रहा है तो मैं इसका स्वागत करता हूँ।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि इन सामुदायिक विकास-योजनाओं का कार्यकाल तीन वर्ष बहुत कम है। पहला वर्ष तो ऐसे ही काम आरम्भ करने और उसको सीखने इत्यादि में खत्म हो जाता है और जो तीसरा वर्ष होता है उसमें कर्मचारियों को अपने विभागों में वापस जाने की उत्सुकता होती है और वे ठीक तरह से काम नहीं कर पाते हैं। बीच का ही एक ऐसा वर्ष रह जाता है जब वे ठीक तरह से काम कर सकते हैं। इस लिए मेरा सुझाव है कि इनका कार्यकाल पाँच वर्ष कर दिया जाए ताकि वे जम कर काम कर सकें।

अब मैं एक अन्य बात की तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। यदि आप चाहें कि आप सारे देश को एक लाठी से हाँक लें, तो आप ऐसा कर नहीं सकेंगे। मैं आपको एक उदाहरण देता हूँ। मैं अपने ज़िले में ज़िला विकास संघ का अध्यक्ष था। उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से एक सर्क्युलर आया कि आपके ज़िले के लिए २० राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों के लिए इतना रुपया मंजूर किया गया है और आप इसको इन-इन मदों पर खर्च कर सकते हैं। उन मदों में से एक मद थी कुएँ बनाना। मैंने ज़िलाधीश को लिखा कि मेरे (पहाड़ी) इलाके में कुएँ नहीं बन सकते हैं, इस लिए इस रुपए का उपयोग सिंचाई के कार्यों पर किया जा सकता है और ऐसा करने की आज्ञा दी जाए। लेकिन यह चीज़ नहीं मानी गई। इसके बाद मैंने विकास आयुक्त को लिखा। उन्होंने कहा कि हमारे ऊपर प्रशासन है, केन्द्रीय सरकार है और उन्होंने एक फारमूला बना रखा है, उसमें हम परिवर्तन नहीं कर सकते। मैं समझता हूँ कि आप कोई तैयार फारमूला बना कर उसको हर जगह पर लागू नहीं कर सकते। आपको स्थानीय अधिकारियों को या वहाँ की प्रान्तीय सरकार को कुछ न कुछ परिवर्तन करने का अधिकार देना चाहिए।

होशंगाबाद विकास-योजना के अन्तर्गत बढ़ई के काम का प्रशिक्षण

होशंगाबाद सामुदायिक विकास खण्ड

भालचन्द्र केलकर

शिशिर ऋतु में पत्तियों-विहीन वृक्षों में फूटती हुई नई मुलायम कोंपलों को देख कर बड़ा आनन्द आता है। गर्मी से तपी पृथ्वी पर वर्षा की पहली फुहार पड़ने से जब मिट्टी में से सोंधी-सोंधी महक निकलती है तब मन मयूर नाच उठता है। सैंकड़ों वर्षों के नीरस जीवन के पश्चात् आज भारत के गाँवों में पल्लवित एवं पुष्पित होनेवाला ग्राम्य जीवन भी क्या ऐसा ही कुछ नहीं है? स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करते समय 'रात्रि के गर्भ में कल का उषाकाल निहित है' सोच कर हम अपने अन्तःकरण में विश्वास उत्पन्न करते थे। आज सात-आठ साल बाद इस उषाकाल का सौन्दर्य क्या सचमुच वहीं प्रकट हुआ है, यह प्रश्न जब मैं दक्षिण भारत की विकास यात्रा पर निकला, तब बराबर मेरे मन में उठ रहा था। 'विकास यात्रा' इसलिए कह रहा हूँ कि इस यात्रा का उद्देश्य केवल सृष्टि एवं कला का सौन्दर्य देखना न था, वरन् हम उन मोर्चों पर जा रहे थे जहाँ दरिद्रता, अज्ञान तथा बीमारी इन तीनों अदम्य शत्रुओं से युद्ध छिड़ा हुआ है। विकास की प्रेरणा समृद्धि की प्रेरक शक्ति है। वह कहीं जन-मन में है अथवा नहीं, यही हम उन लोगों के हृदय में झाँक कर देखना चाहते थे।

अंग्रेज़ों ने इस देश में एक बड़े विशाल नौकरशाही यंत्र की स्थापना की थी। उसका उद्देश्य सर्वत्र नियंत्रण रखना था। इस यंत्र का कुछ उपयोग लोकहितकारी राज्य निर्माण के लिए भी होता है या ये लोग अभी तक उसी पुराने नौकरशाही ढर्रे पर चल रहे हैं यही हमें देखना था। पंचवर्षीय योजना जनता की योजना है। क्या यह बात वास्तव में जनता समझती है यह विचार भी इस यात्रा पर निकलते समय मेरे मन में उठ रहा था।

पच्चीस दिन की इस विकास-यात्रा में मैंने तीन सामुदायिक

विकास केन्द्र और कई बड़ी योजनाएँ, गवेषण संस्थाएँ तथा सैनिक विद्यालय देखे। मध्य प्रदेश, मद्रास, आन्ध्र और हैदराबाद राज्यों को सरसरी तौर से देखने की दिशा में यह एक प्रयत्न था। स्थानीय जनता में जितना मिला-जुला जा सकता था, उसके जीवन को जितने निकट से देखा जा सकता था, वह देखने का प्रयत्न भी किया। भारत में प्राकृतिक सौन्दर्य जितना विविध है, उतना ही मानवता का सौन्दर्य मोहक है। देश के प्रत्येक कोने में हमें यह आत्मीयता दिखाई देती है। इसका अनुभव हमने इस समय किया। सभी भारतीय एक हैं। उनकी कुछ समस्याएँ एक हैं; भारतीय किसान सर्वत्र एक-सा है, कष्ट ही उसका एक मात्र साथी है। बरसाती नदी के प्रवाह की भाँति उसका जीवन अनिश्चित है। वर्षा में वह समृद्धि के कारण किनारों का उल्लंघन कर जाता है। गर्मी में कुछ नदियों के पाट की भाँति वह सूखता जाता है। जब हरी-भरी भूमि अपना शुष्क रूप दिखाने लगती है तब उसकी तपन किसान-जीवन पर भी पड़ने लगती है। बेकारी इतना बड़ा अभिशाप है कि उससे अधिकतर किसान छुटकारा नहीं पा सकते। भारतीय किसान को इससे मुक्ति दिलाने वाले प्रयत्न वस्तुतः सराहनीय हैं। हमने मध्यप्रदेश का एक और मद्रास के दो सामुदायिक विकास खण्ड देखे।

सामुदायिक विकास खण्ड जनता की शक्ति को, उत्साह का आह्वान करनेवाली एक भव्य योजना है। जिस देश में ग्राम पंचायतों का राज था कम से कम उस देश में यह कल्पना नई नहीं है। अंग्रेज़ों की नीति के कारण भले ही हमारा जीवन ऊपरी तौर से विकृत हो गया हो, फिर भी ग्राम्य जीवन में अब भी पुराने मूल्यों का बड़ा प्रभाव है। जब आप उनका आह्वान करते हैं—उनके पास जाते हैं तब आपको ऊपरी तौर से दिखाई पड़ने वाले दरिद्र के चीथड़ों के नीचे हृदय एवं भावनाओं की रईसी दुबकी बैठी दिखाई देगी। मद्रास के एक गाँव की एक बूढ़ा से मैंने एक प्रश्न किया—"इस विकास खण्ड से तुम्हारा या तुम्हारे पति का कुछ प्रत्यक्ष लाभ हुआ है?" उसने तत्काल उत्तर दिया—"मुझे या मेरे पति को कुछ भी लाभ नहीं हुआ, लेकिन मेरे बाल-बच्चों को पाठशाला मिल गई। उनके लिए अस्पताल बन गया है। यही हमारा लाभ है और दूसरा लाभ यह है कि इस विकास खण्ड के कारण ही सही, आप जैसे लोग हमारे गाँव में आने लगे।" मैंने सोचा विकास खण्ड के विषय में जनता जो कुछ सोचती है, वह इस उत्तर में निहित है।

नर्मदा नदी के किनारे सतपुड़ा और विन्ध्याचल पर्वतों के अंचल में बसा हुआ होशंगाबाद और उसके आसपास के गाँव अपने विकास के लिए नव उत्साह से प्रयत्न कर रहे हैं। एक हज़ार वर्ग मील के इस प्रदेश के लगभग ३ लाख लोग श्री ए० बी० रैनबोथ नामक ज़िला विकास अधिकारी के नेतृत्व में काम कर रहे हैं। पंक से निकलने वाला पंकज इस विकास केन्द्र का प्रतीक है और सचमुच ही यह प्रतीक सार्थक है। वहाँ की जनता का उत्साह देखकर इस बात का विश्वास हो जाता है। ज़िला विकास अधिकारी जनता में इतने लोकप्रिय हैं कि यहाँ के लोग उन्हें देवता तुल्य समझते हैं। अपनी खुली जीप में जाते हुए यदि वह कहीं भी दिखाई पड़ते हैं तो गाँव के छोटे-छोटे बालक ठहर कर उन्हें एक दम 'जय हिन्द' करते हैं। उनका नियम है कि प्रत्येक गाँव के विकास मंडल द्वारा सुझाए जाने पर ही किसी इच्छित कार्य पर विचार किया जाएगा। इसीलिए प्रत्येक गाँव में एक विकास मंडल है। यह गैर-सरकारी संस्था किसानों के लिए कर्ज़ सम्बन्धी सिफ़ारिश से लेकर अन्य सभी मामलों में सरकार को सलाह दिया करती है। यहाँ के अधिकारियों का विचार है कि स्थानीय नेतृत्व के अभाव में विकास खण्ड लूला-लँगड़ा सिद्ध होगा। इसीलिए इस संस्था को इतना महत्त्व दिया गया है। फिर भी विकास कार्य बिना विरोध के नहीं हो पाया है। मालाखेड़ी नामक बारह सौ आदमियों की बस्ती वाला एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ जाने पर मुझे पता लगा कि काफ़ी दिनों तक इस गाँव के लोग विकास योजना में शामिल नहीं हो रहे थे। फिर भी बिना हिम्मत हारे वहाँ के अधिकारी डटे रहे। जुलाई १९५३ में हैज़ा फैला। उसमें ३३ व्यक्ति बीमार पड़े और छः मरे। पहले पहल कोई भी टीका लगवाने के लिए तैयार नहीं था। पर मृत्युसंख्या बढ़ते ही वे तैयार हो गए। ग्राम सेवकों ने इस अवसर से लाभ उठाया और सितम्बर १९५३ में तत्काल विकास मंडल की स्थापना की गई। तब से हर दिशा में इस गाँव में विकास कार्य हो रहा है। इस गाँव के कुछ लोगों ने एक सहकारी संस्था की स्थापना की है तथा गेहूँ ओसाने की मशीन स्वयं बनाना आरम्भ कर दिया है। पहले बाज़ार में इस मशीन की कीमत ५००) रुपए थी। इस समिति के कारण अब उसकी कीमत पौने चार सौ रुपए पर आ गई है। इस मशीन की बिक्री आरम्भ होते ही उसकी कीमत घट गई। इस गाँव में बिना धुएँ की अंगीठियाँ लोकप्रिय बनाने का प्रयत्न भी ज़ोर से हो रहा है। गाँव की स्त्रियों को स्वच्छता के सबक सिखाने का प्रयत्न हो रहा है और उसका परिणाम भी दिखाई देने लगा है। गत डेढ़ साल में इस गाँव में फौजदारी अपराध केवल एक ही हुआ है। एक विधवा को किसी ने लूट लिया था, पर अपराधी को देहातियों ने स्वयं ही खोज निकाला।

एक गाँव के अस्पताल और बाल-केन्द्र में मैं गया। किसी धनी ने उनके लिए तीस हज़ार रुपए दान में दिए थे। वहाँ पर सबसे बड़ी बीमारी मलेरिया ही दिखाई पड़ी। सन् १९५३ में

लगभग दो हज़ार व्यक्ति मलेरिया से बीमार पड़े थे लेकिन सन् १९५४ में संख्या १,२०० पर आ गई; यह शायद मच्छरों को मारने के लिए चल रहे प्रयत्न का ही परिणाम है। फिर भी क्षय रोग की रोकथाम के लिए वहाँ अभी तक बी० सी० जी० नहीं पहुँची है।

एक गाँव में एक पशु-चिकित्सालय है। उस ओर आवारा मवेशी एक समस्या बन गए हैं। एक विकास खण्ड के १०५ गाँवों में से ४७ गाँवों को लगभग ३५० मवेशियों का गिरोह सताए हुए था। किसानों का हर साल लगभग २ लाख रुपए का नुकसान हुआ करता था। पाँच-छः साल पूर्व कुछ लोगों ने इन मवेशियों को पकड़ने का प्रयत्न किया था। लेकिन सामूहिक प्रयत्न के अभाव में उनका प्रयत्न सफल नहीं हो पा रहा था। इस काम की ओर विकास अधिकारियों ने ध्यान दिया और आवारा मवेशियों को रोकने के लिए काँटेदार तार की बाड़ बनाई तथा उनके लिए काज़ी हौज़ के निर्माण आदि की योजानाएँ बनाई गईं। इसके लिए गाँववालों ने लगभग आठ हज़ार रुपया इकट्ठा किया। इतने वर्षों से सताने वाला प्रश्न सहज ही हल हो गया।

होशंगाबाद में ग्राम्य उद्योग-धन्धों का भी केन्द्र है। वहाँ हाथ की बुनाई होती है, लोहार का काम होता है तथा फ़र्नीचर बनाने का प्रयत्न भी चल रहा है। खेती के लिए आवश्यक विविध प्रकार के लोहे के औज़ार वहीं तैयार किए जाते हैं। बाज़ार की अपेक्षा उनकी कीमत भी कम होती है। यहाँ के किसान इसी केन्द्र से औज़ार ख़रीदने लगे हैं।

इसी प्रकार होशंगाबाद के पशु-चिकित्सालय में मुर्गियों को ठीक ढंग से रखने के लिए छोटे छोटे घर हैं; मुर्गियों को तार के कठघरे में रखना महँगा पड़ने के कारण ये झोंपड़ियाँ बनाई गई हैं। इस प्रकार की झोंपड़ी की कीमत साढ़े नौ रुपए के लगभग है।

दूसरा आकर्षण बाल-केन्द्र है। वहाँ प्रत्येक जाति के, प्रत्येक वर्ग के बालक दिखाई पड़े। उनके गाने बड़े ही उपयुक्त थे। छोटे बच्चों को दूध क्यों पीना चाहिए, रास्ते कैसे होने चाहिएँ, इत्यादि विविध विषय उन गानों में समाविष्ट थे। मुझे बताया गया कि एक केन्द्र में जब छोटे बच्चों को उनका पूरा प्रतिबिम्ब आइने में दिखाने का विचार व्यवहार में लाया गया तब उसका बहुत ही अच्छा प्रभाव हुआ। क्योंकि गाँव के अनेक बच्चों ने अपना पूरा प्रतिबिम्ब आइने में कभी देखा ही नहीं था।

राष्ट्रीय विस्तार सेवा के लिए ग्राम सेवकों की आवश्यकता होती है। उनके लिए स्थान-स्थान पर शिक्षा केन्द्र हैं। यहाँ के पवारखेड़ा गाँव में इस प्रकार का एक केन्द्र है, जिसमें साल भर के शिक्षा क्रम में मुख्यतः खेती पर ज़ोर दिया जाता है। इसमें दाखिल होने वाले विद्यार्थियों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया जाता है। पवारखेड़ा में इस समय शिक्षा पाने वाले विद्यार्थियों में खेती करनेवाले ही अधिक हैं। आजकल जो ग्राम सेवक नियुक्त होते हैं उनका बौद्धिक स्तर क्या होता है? वे वास्तविकता में ग्राम जीवन से समरस होकर कार्य करते हैं या केवल बेकार रहने की अपेक्षा कोई भी नौकरी करना ठीक समझ कर भर्ती होते हैं? यह प्रश्न कुछ लोगों ने स्थानीय अधिकारियों से पूछे। उनके उत्तर को देखते हुए कहा जा सकता है कि किसी हद तक ग्राम सेवकों के रूप में एक आदर्शवादी युवक वर्ग पैदा हो रहा है। इस शिक्षा केन्द्र के अनेक विद्यार्थियों ने टीका लगाना, स्वयं खेती करना आदि अनेक लोकोपयोगी कामों की ओर ध्यान दिया है। मध्य प्रदेश में पैंतीस सौ ग्राम सेवकों की आवश्यकता है। लेकिन अभी लगभग एक हज़ार ग्राम सेवक हैं। इससे अन्दाज़ लगाया जा सकता है कि ग्राम सेवकों की कितनी अधिक आवश्यकता है।

होशंगाबाद के विकास खण्ड में मुझे एक महत्वपूर्ण विशिष्टता दिखाई दी। जो वहाँ के अधिकारियों का वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल अपने को ढाल कर लोगों से सहयोग प्राप्त करना है। उदाहरणार्थ, इटारसी में ४० वर्ष पूर्व लन्दन की 'फ्रेन्ड सर्विस कौंसिल' ने एक अस्पताल स्थापित किया था। युद्ध-काल में उसे मिलनेवाली वार्षिक सहायता कम हो गई। जब अस्पताल घाटे में चलने लगा तब उसकी व्यवस्था एक वैयक्तिक संस्था को सौंपी गई। अब इस अस्पताल से अनेक लोग लाभ उठा रहे हैं और उसमें फ़ीस भी आमदनी के अनुसार कम अधिक ली जाती है। अधिकारियों की एक और सूझ का उदाहरण दिखाई दिया। उन्होंने अनेक गाँवों में नाज-संचय या 'राम-कोठी' की योजना चलाई है। यहाँ के किसानों में प्रथा है कि फसल की तुलाई के समय पहला तोल राम के नाम से दे दिया जाता है। इस प्रथा से लाभ उठाकर प्रत्येक किसान से एक तोल नाज लेकर इकट्ठा किया जाता है। अधिक नाज को बेच कर उसकी कीमत जनता के उपयोग के लिए खर्च की जाती है। इस केन्द्र में इस प्रकार की ११२ 'राम कोठियाँ' हैं, तथा अब तक उनमें पौने छः सौ मन अनाज संचय किया गया है। इसी प्रकार नर्मदा नदी के कुछ घाट गत ५० वर्षों से पट गए थे। होली की छुट्टियों में लोगों को एकत्र करके घाट साफ़ किए गए। इटारसी में सहकारिता की प्रवृत्ति जितनी बढ़ गई है उसके उदाहरण के लिए सन् १९५४ में हुई जमादारों की हड़ताल का

[शेष पृष्ठ ३० पर]

'विस्तार' शब्द से क्या तात्पर्य है ?

जॉन बाथगेट

[इलाहाबाद कृषि संस्था में कृषि विस्तार अधिकारियों के अल्प-कालीन प्रशिक्षण कोर्स की कक्षा में सामूहिक वाद-विवाद]

एक प्रशिक्षणार्थी ने अध्यापक से प्रश्न किया—"सरकार ऐसा कोई कानून क्यों नहीं बनाती जिससे किसानों के लिए सुधरे हुए बीजों का प्रयोग करना अनिवार्य हो जाए ?"

कक्षा में सामुदायिक विकास-योजनाओं पर वाद-विवाद हो रहा था। अध्यापक विस्तार के आधारभूत सिद्धान्तों पर प्रकाश डाल रहा था और यह समझा रहा था कि किस प्रकार इस दिशा में जन-सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

अध्यापक ने उत्तर दिया—"तुमने एक महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित किया है। पहले इस पर विचार कर लिया जाए कि इस प्रश्न से तुम्हारा वास्तविक तात्पर्य क्या है ? क्या तुम यह जानना चाहते हो कि इस प्रकार के परिवर्तन लाने के लिए लोगों को प्रेरित करने की अपेक्षा बाधित क्यों नहीं किया जाता ? और क्या तुम यह समझते हो कि इस विषय के ज्ञान के प्रसार की अपेक्षा कानून बनाने से प्रगति शीघ्रतर होगी ?"

"जी हाँ, मेरा तात्पर्य यही है। भारत की अपेक्षा अन्य देशों ने बहुत शीघ्र ही प्रगति की है चूंकि वहां वे लोगों को नवीन विधियाँ अपनाने को बाध्य करते हैं। यदि हम यह प्रतीक्षा करें कि प्रत्येक व्यक्ति धीरे-धीरे अपनी इच्छानुसार प्रगति की ओर आए तो इस दिशा में बहुत ही धीमे क़दम से बढ़ पाएँगे।"

अध्यापक कुछ अधिक गम्भीर होकर बोला—"मेरा विचार है कि इस बात से सभी सहमत होंगे कि हम सब यथाशीघ्र प्रगति करना चाहते हैं। और हम यह भी स्वीकार करते हैं कि गाँव वालों को नई-नई विधियाँ अपनानी होंगी। परन्तु प्रश्न यह है कि करने का सर्वोत्तम उपाय कौन-सा है ?"

एक दूसरा प्रशिक्षणार्थी बोला—"जिस राज्य का मैं निवासी हूँ, वहाँ बड़े-बड़े भू-स्वामी हैं जो हरी खाद का उपयोग इसलिए नहीं करते चूंकि वे किसी प्रकार का कोई परिवर्तन ही नहीं चाहते। उन्हें वे काम करने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए जो सामूहिक-हित के हों। यदि वे ऐसा करने से इंकार करें तो उन्हें दण्ड दिया जाना चाहिए।"

तीसरे ने अपने उस साथी से जो अभी बोल रहा था प्रश्न किया—"क्या आप यह कहना चाहते हैं कि किसी कार्य विशेष को न करने के कारण सरकार दण्ड विधान बनाए ?"

"नहीं मेरा तात्पर्य इससे नहीं है," उसने उत्तर दिया, "परन्तु मेरा आशय यह है कि सरकार को समाज के कल्याण के लिए कार्य अवश्य करना चाहिए और कभी-कभी उचित कार्य करवाने के लिए लोगों को बाध्य भी किया जा सकता है।"

अध्यापक ने बातचीत रोक कर कहा—"सरकार को विधान और सुव्यवस्था तो कायम रखना ही चाहिए और कभी-कभी इस कार्य के कराने के लिए लोगों को बाध्य भी किया जा सकता है परन्तु इस सम्बन्ध में कहाँ तक नियमादि बनाए जा सकते हैं ? क्या तुम्हारा यह विचार है कि जितने भी परिवर्तन करने हों उन सब के सम्बन्ध में कानून बनाए जाएँ ?"

इस प्रश्न पर कई एक साथ बोलने को उद्यत हुए। सब ही ने यह विचार प्रकट किया कि प्रत्येक परिवर्तन के लिए कानून बनाना अव्यावहारिक सिद्ध होगा। एक प्रशिक्षणार्थी ने कहा—"जिस राज्य का मैं निवासी हूँ वहाँ एक ऐसा कानून है जिसके अनुसार १२ वर्ष की आयु तक के बच्चों को स्कूल भेजना अनिवार्य है। परन्तु उस कानून पर अमल नहीं किया जा सकता। एक किसान यह कह सकता है कि उसे तो अपने पुत्र को जंगल में पशु चराने के लिए भेजना है। यदि उससे यह कहा जाए कि इस काम के लिए वह कोई व्यक्ति किराए पर रख सकता है तो वह यही कहेगा कि इसका खर्च कौन उठाएगा। इस दृष्टि से जो भी कानून बनाया जाए वह व्यवहार्य होना चाहिए, वर्ना वे निरे कागज़ पर लिखे ही रह जाते हैं, उनको लागू नहीं किया जा सकता।"

एक अन्य ने कहा—"यह ठीक है। देश में बहुत से ऐसे कानून हैं जिन पर अमल नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए आप शारदा एक्ट को लीजिए। उस पर अमल नहीं हो पाता, चूँकि लोग उसे मानने के लिए तैयार नहीं हैं।"

इस पर अध्यापक ने उत्तर दिया—"मैं तुमसे सहमत हूँ। कानूनों का व्यवहार्य होना आवश्यक है। पर मैं समझता हूँ कि अभी हम वास्तविक विषय पर नहीं पहुँच पाए हैं। हम सब इस बात से तो सहमत ही हैं कि कुछ कानून बनाए जाने चाहिएँ और उन पर अमल भी होना चाहिए। यदि कोई महामारी

फैल जाए और सब पशुओं के जीवन को खतरा हो जाए तो सरकार सब किसानों को अपने पशुओं को टीका लगवाने पर बाध्य कर सकती है। समाज के हित को व्यक्तिगत हितों से अधिक महत्व देना ही चाहिए। परन्तु इसका क्या कारण है कि हमारी सरकार सब उचित परिवर्तनों के लाने के लिए कानून नहीं बना पाती?"

एक प्रशिक्षणार्थी ने कहा—"उस विषय पर तो प्रकाश डाला जा चुका है। ऐसे कानून तो अमल में लाए ही नहीं जा सकते।"

अध्यापक ने कहा—"हाँ, परन्तु इसका कुछ अधिक गम्भीर कारण भी होगा।"

कुछ देर तक मौन रहा। फिर एक प्रशिक्षणार्थी बोला—"सरकार कुछ कानून तो पास नहीं कर सकती चूंकि इस देश में प्रजातन्त्र शासन है और प्रजातांत्रिक राज्य में सरकार लोगों को कोई कार्य करने के लिए बाध्य नहीं कर सकती।"

"यही बात है", अध्यापक ने कहा—"हमारे संविधान में कुछ अधिकार और स्वतन्त्रताएँ दी गई हैं। इसी प्रकार की सरकार बनाने का हमने चुनाव किया है। सरकार लोगों के क्रिया-कलापों में दखल नहीं दे सकती जब तक वह संविधान को न बदले या प्रजातन्त्र की विचारधारा न बदले।"

बीच में बात रोकते हुए किसी ने कहा—"जो आप कहते हैं वह आदर्शवाद है। परन्तु कुछ लोग बहुत सुस्त होते हैं और परिवर्तन पसन्द नहीं करते। और कुछ परिस्थितियों में हमें अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए लोगों को बाध्य करना ही होगा।"

"मैं तुम्हारे विचारों को समझ सकता हूँ," अध्यापक ने कहा—"उस समय बहुत निराशा होती है जब लोग सहयोग देने की अपेक्षा प्रगति के पथ में बाधा पहुँचाते हैं। परन्तु हम विस्तार-कार्यकर्ताओं को यह समझना चाहिए कि लोग ऐसा व्यवहार क्यों करते हैं? उदाहरणार्थ, कोई पिता अपने पुत्र को उसके हित की किन्हीं बातों को करने के लिए बाध्य कर सकता है परन्तु उसे अपने पुत्र को ऐसी शिक्षा भी देनी चाहिए जिससे वह बिना किसी दबाव के अपने हित के कार्य कर सके। अन्यथा उस पुत्र की वास्तविक उन्नति नहीं हो सकेगी। वह हमेशा कुछ भी करने के लिए लोगों का मुँह ही ताकता रहेगा।"

अध्यापक ने आगे कहा—"और क्या सरकार बहुत सी बातों में पितावत् नहीं है? कुछ कानून अवश्य ही बनाए जाने चाहिएँ और उन पर अमल भी होना चाहिए। परन्तु प्रजातांत्रिक सरकार का वास्तविक ध्येय स्वतन्त्र और ज़िम्मेदार नागरिक बनाना है। ऐसा हम उनकी स्वतन्त्रता और ज़िम्मेदारियों को छीन कर कभी भी नहीं कर सकते।"

बहुत से लोग इस से सहमत थे। "परन्तु दिक्कत तो इस बात की है," उनमें से एक ने कहा—"बहुत से लोग ज़िम्मेदारी उठाना नहीं चाहते। यदि हम किसी गाँव में हरी खाद का उपयोग करना अनिवार्य कर दें तो अन्ततः ग्राम-वासी उसके लाभ से परिचित हो जाएँगे और इस प्रकार हम अधिक शीघ्रता से काम करा सकते हैं।"

अध्यापक ने कहा—"मैं जानता हूँ यह बहुत ही आकर्षक विचार है। किसी ने कहा है 'यदि मुझे अधिनायक बना दिया जाए तो मैं भारत में एक प्रजातंत्र स्थापित कर के दिखा सकता हूँ।' कठिनाई इस बात की है कि कोई भी अधिनायक लोगों को स्वतन्त्र नहीं रहने दे सकता। जब किसी व्यक्ति को कुछ थोड़े से अधिकार दे दिए जाते हैं तो उसे अधिक की लालसा होती है। वह लोगों को अपनी ही विचारधारा के अनुकूल ढालने का प्रयास करता है।

"और हमें एक बात का और ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी बात के लिए बहुत अधिक जल्दी करना ग़लत ही होता है। प्रगति के पथ पर लोगों को चलने की शिक्षा देने में कुछ समय तो लगेगा ही। परन्तु उन्हें इस ओर जागरुक करना ही सर्वोत्तम और प्रभावशाली उपाय है। आप में से कुछ ने तो अपने-अपने क्षेत्रों में ऐसा अनुभव किया ही होगा।"

एक प्रशिक्षणार्थी ने कहा—"मैंने अनुभव किया है कि हम अच्छी किस्म का गन्ना बोने को प्रेरित करते रहे हैं और ८० से ८५ प्रतिशत लोग बिना कानून और ज़बरदस्ती के वैसा करते रहे हैं।"

अध्यापक ने पूछा—"उन्होंने ऐसा करना क्यों स्वीकार कर लिया?"

प्रशिक्षणार्थी ने उत्तर दिया—"चूंकि उन्हें उसकी उत्तमता पर विश्वास था।"

अध्यापक ने बात पूरी करते हुए कहा—"चूंकि उन्हें इस बात का विश्वास था, इसलिए दो महत्वपूर्ण फायदे हुए। पहला तो यह कि अधिक उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति हो गई और दूसरा यह कि किसान अब और परिवर्तनों के लिए तैयार हो गए हैं। दूसरी बात अधिक महत्वपूर्ण है। लोगों को एक सीमा तक ही किसी बात के लिए बाध्य किया जा सकता है। इससे लोगों को दूसरे परिवर्तनों के लिए

तैयार नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत शिक्षा का क्षेत्र धीरे-धीरे अधिकाधिक होता जाता है। और जितना ही लोग अपनी प्रेरणा से प्रेरित होकर कार्य करेंगे उतना ही उन्हें भविष्य के परिवर्तनों के लिए तैयार किया जा सकेगा।"

एक प्रशिक्षणार्थी ने कहा—"जो आप कहते हैं वह ठीक हो सकता है, परन्तु भारत शिक्षा के धीरे-धीरे प्रसार होने तक इन्तज़ार नहीं कर सकता।"

अध्यापक ने उत्तर दिया—"यदि हम उन्नति के पथ पर कानून और ज़बरदस्ती की सहायता से बढ़ने का प्रयत्न करेंगे तो इसकी बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। हमें इन कार्यक्रमों को चालू रखने के लिए सरकारी खर्च पर बहुत से अधिकारी रखने पड़ेंगे। और यदि सरकार पुलिस की भाँति यह देखने का बीड़ा उठा ले कि प्रत्येक किसान वही कुछ करता है जो उसे करने के लिए कहा गया है तो हमें इस काम के लिए जितना खर्च पंचवर्षीय योजना पर होता है, उससे भी अधिक व्यय करना होगा।"

जिस प्रशिक्षणार्थी ने सबसे पहला प्रश्न पूछा था उसने कहा "यदि सारे भारत के सम्बन्ध में इस प्रकार से बल का प्रयोग नहीं किया जा सकता तो किसी एक खण्डमें परीक्षण के तौर पर तो ऐसा किया जा सकता है?"

अध्यापक ने कुछ हँसते हुए उत्तर दिया—"जैसे सम्पूर्ण जनता के अधिकारों पर आघात नहीं किया जा सकता, इसी प्रकार किसी क्षेत्र विशेष के लोगों के अधिकारों का हनन नहीं किया जा सकता। यह तो ठीक ही है कि किसी भी ऐसे कार्यक्रम में जिसमें बल प्रयोग की बात होगी, खर्च बहुत अधिक होगा, परन्तु इससे भी अधिक महत्व इस बात का है कि इस सब से जन-शक्ति व्यर्थ जाएगी। यह ऐसे हीन और परावलम्बी लोगों को जन्म देगा जो प्रत्येक समस्या के समाधान और प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति के लिए सरकार का मुँह ताकेंगे। यह अनावश्यक तो है ही, साथ ही व्यर्थ भी है। हमारे गाँववाले भाई बुद्धिमान हैं। उनमें सजीव आत्मा है। और हमारा 'विस्तार' से उद्देश्य यही है कि उन्हें अपनी बुद्धि और अन्तर्प्रेरणा के विकास का अवसर उपलब्ध कराएँ। हमें गाँवों के साधनों को विकसित करने में कुछ देर अवश्य लग सकती है। परन्तु जब हम कमर कस कर तैयार हो जाएँगे तो देश में परिवर्तन लानेवाली ऐसी शक्ति का जन्म होगा जिसका हम अभी अनुमान ही नहीं लगा सकते और उसके लिए प्रतीक्षा करना अच्छा ही होगा।"

अध्यापक की बात समाप्त होने पर कई लोग बोलने लगे। कई उनसे सहमत थे, कई उसमें संशय प्रकट करने लगे।

अध्यापक ने कहा—"मैं समझता हूँ कि हमने इस विषय पर काफी विवाद किया। कुछ मूलभूत बातों पर प्रकाश डाला गया। सम्भव है हम सब इससे सहमत न हों परन्तु यह बात महत्व रखती है कि हम अपने संशयों को एक दूसरे के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार हम अपने इच्छित लक्ष्य तक पहुँचने के लिए सर्वोत्तम उपाय ढूँढ़ निकालेंगे। इस बात को फिर याद कर लें कि हम सब इससे सहमत हैं कि भारत की प्रगति अवश्य होनी चाहिए। हम सब विस्तार सेवाओं में इसी उद्देश्य से देश की सेवा करने का प्रयत्न कर रहे हैं। हम सब अपने ग्रामीण भाइयों को बेहतर ज़िंदगी बिताने के लिए मदद करना चाहते हैं। हम कृषि उत्पादन बढ़ाना चाहते हैं। हम किसानों को उनकी समस्या सुलझाने में मदद देना चाहते हैं। देश के बच्चे स्वस्थ हों। पशु आदि शक्तिशाली हों। सबसे बड़ा प्रश्न तो यह है कि किस प्रकार यह सब हासिल कर सकते हैं और साथ ही लोगों को स्वतंत्र, आत्मनिर्भर और उत्तरदायी नागरिक बना सकते हैं? हमें अपने उच्चतम लक्ष्य से कभी भी ध्यान नहीं हटाना चाहिए।"

★

होशंगाबाद सामुदायिक विकास खण्ड—[शेष पृष्ठ २७ का शेषांश]

उल्लेख किया जा सकता है। उस समय सब जमादारों ने अचानक हड़ताल कर दी तो गाँव के युवकों ने बड़ी स्फूर्ति से एकत्रित होकर पाखाने इत्यादि साफ़ किए और उस हड़ताल का मुकाबला किया। हड़ताल का कारण क्या था, उस ओर ध्यान न देकर उस समय गाँववालों द्वारा दिखाई गई प्रवृत्ति पर विचार करना अधिक महत्व रखता है।

सामुदायिक विकास खण्डों का अपने-अपने गाँवों के वातावरण पर प्रभाव डालना ही उनकी सफलता का चिन्ह समझना चाहिए। प्रत्येक गाँव में कुछ न कुछ नई बात हो रही है। अपना गाँव अच्छा बनाने की इच्छा अनेक स्थानों के लोगों में दिखाई पड़ी। गाँव के परस्पर झगड़ों का निबटारा किस प्रकार किया जाता है, इसके उदाहरण गाँववालों ने मुझे बताए। सरकारी अधिकारियों की नम्रता एवं मिलनसारी ने यहाँ का वातावरण ही बदल दिया है। यहाँ अधिकारी बड़ी तन्मयता से काम कर रहे हैं। प्रत्येक गाँव के अनेक लोगों से उनका व्यक्तिगत परिचय है और ग्रामीणों की आवश्यकताओं का उन्हें ज्ञान है। वे केवल यांत्रिक दृष्टि से विचार नहीं करते। उनमें लोक-सेवा की भावना है।

[अनुवादक : र० श० केलकर]

प्रगति के पथ पर

उत्तर-पूर्वी सीमान्त क्षेत्र में नई जागृति

उत्तर-पूर्वी सीमान्त अभिकरण (एजेंसी) में एक नई जागृति दिखाई दे रही है। यह जागृति सामुदायिक विकास-योजनाएँ चलाने, नई सड़कों और भवनों के निर्माण तथा अस्पताल खुलने से फैली है। इस सर्वांगीण प्रगति में जनता के श्रमदान तथा उत्साह का बहुत बड़ा हाथ रहा है।

कामेंग सीमा डिवीज़न में सरकारी कर्मचारियों तथा आदिमजाति के लोगों ने श्रमदान करके भवन और सड़कें तैयार की हैं, जिनका मूल्य ६० हज़ार रुपया आँका गया है। बोमदिला में कुटीर उद्योग प्रशिक्षण केन्द्र के कर्मचारियों तथा आदिमजाति के छात्रों ने श्रमदान से एक दुकान तैयार की है, जिसके बनाने में लगभग १० हज़ार रुपया खर्च आता। सरकारी विभाग के आरा चलाने वालों, बढ़इयों तथा आदिमजाति के प्रशिक्षणार्थियों ने एक अतिथिशाला तैयार की है। खेनेवा के प्रशासन केन्द्र के सारे भवन असम राइफ़िल्स ने जनता और सरकारी कर्मचारियों के सहयोग से बनाए। इस केन्द्र का अभी हाल में ही उद्घाटन हुआ है। सन् १९५० के भूकम्प में तावांग के प्रसिद्ध मठ को क्षति पहुँची थी, परन्तु तावांग गाँव की जनता ने स्वयं अपनी मेहनत से मठ की मरम्मत कर ली है। इस काम पर १० हज़ार रुपए से भी अधिक व्यय हो जाता। दिरंगदज़ोंग की जनता ने दो विश्राम शिविर बनाए और तावांग-वासियों ने अपनी बस्ती में एक नया विश्रामगृह बनाया है जो पहले विश्रामगृह से भी अच्छा है।

जनता के श्रमदान से सड़कों का भी सुधार हो रहा है। बोमदिला और रूपा के बीच के पहाड़ी रास्ते की जगह अब एक सड़क ने ले ली है जिस पर जीप गाड़ी चल सकती है। खावा गाँव की जनता ने श्रमदान से बोमदिला और वांघू के बीच की पगडंडी को जीप गाड़ी के चलने योग्य सड़क बना दिया है। पूरे अभिकरण में साग-सब्ज़ियों की कमी है, परन्तु कुछ प्रशासन केन्द्रों में अब अपनी आवश्यकता की तरकारियाँ उगाई जाने लगी हैं।

विभिन्न प्रशासन केन्द्रों में शनिवार की अपराह्न का समय सामुदायिक काम-काज के लिए दिया जाता है। सरकारी कर्मचारी जंगल साफ़ करने तथा सफ़ाई करने में मदद करते हैं। अप्पातानी पठार के ग्यारह गाँवों में से हरि गाँव की जनता ने एक स्कूल बनाने के लिए प्रधान मन्त्री को उनके जन्म दिवस के उपलक्ष्य में २५ एकड़ भूमि भेंट की। गाँववालों ने अस्पताल तक एक जीप गाड़ी चलने योग्य सड़क भी बनाई है।

दूसरी योजना में ५,००० ग्राम सेविकाएँ

दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक ५,००० ग्राम सेविकाओं को प्रशिक्षण देकर तैयार करने का विचार है, ताकि भरपूर विकास के प्रस्तावित २,५०० खण्डों में से प्रत्येक में २-२ ग्राम सेविकाएँ हो सकें। यह सूचना केन्द्रीय कृषि मंत्री, डा० पंजाबराव देश-मुख ने दिल्ली के लेडी इरविन कालेज में, ग्राम्य क्षेत्रों के लिए हस्तशिल्पों और शिक्षा के उपकरणों की प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए अपने भाषण में दी। उन्होंने कहा कि गान्धी जी की विचार-धारा के अनुसार 'समग्र' ग्राम सेविकाएँ तैयार के लिए केन्द्रीय खाद्य एवं कृषि मंत्रालय ने २४ मई १९५४ से एक राष्ट्रीय गृह विज्ञान विस्तार कार्यक्रम चलाया है। इस समय उसके अन्तर्गत २० राज्यों में २७ प्रशिक्षण केन्द्र कार्य कर रहे हैं। डा० देशमुख ने बताया कि खाद्य एवं कृषि मंत्रालय ने यह नए ढंग का कार्य अपने हाथ में लिया

है। आधुनिक भारत के इतिहास में यह पहला अवसर होगा जब गृह विज्ञान की आवश्यक शिक्षा प्राप्त ग्राम सेविकाएँ गाँवों के अब तक उपेक्षित घरों में जाकर वहाँ के लोगों के रहन-सहन के ढंग में सुधार करेंगी। उन ग्राम सेविकाओं के माध्यम से आधुनिक जीवन का व्यावहारिक ज्ञान गाँवों के घर-घर में पहुँचेगा।

विकास योजनाओं के लिए भारत-अमेरिका के बीच करार

भारत-अमेरिका टेक्नीकल कार्यक्रम के अन्तर्गत दोनों देशों की सरकारों ने ५ नए करारों पर हस्ताक्षर किए हैं। अमेरिका ने पहली जुलाई १९५५ से ३० जून १९५६ तक के वर्ष में भारत के विकास कार्यों में सहायता के लिए ५ करोड़ डालर निर्धारित किए हैं। इन पाँच करारों द्वारा इसमें से २ करोड़ ६० लाख डालर के खर्च की व्यवस्था की गई है। ये करार नल-कूपों के निर्माण के लिए नल सप्लाई करने, रेलों के लिए इस्पात देने, मलेरिया नियंत्रण के लिए डी० डी० टी० तथा अन्य साज़-सामान देने, उर्वरक सप्लाई करने और गाँवों में बिजली पहुँचाने के लिए खम्भों की व्यवस्था करने के सम्बन्ध में हैं।

सामुदायिक विकास-योजनाओं में छोटे और घरेलू उद्योगों का विकास

नई दिल्ली में मार्च के पहले सप्ताह में एक गोष्ठी हुई, जिसमें इस बात पर विचार किया गया कि सामुदायिक विकास-योजना क्षेत्रों में छोटे तथा घरेलू उद्योगों के विकास के लिए क्या व्यवस्था की जाए। इस गोष्ठी का आयोजन करने का उद्देश्य यह विचार करना था कि सामुदायिक विकास-योजनाओं में छोटे तथा घरेलू उद्योगों के विकास के लिए नियुक्त किए जाने वाले विस्तार अधिकारियों को किस प्रकार प्रशिक्षण दिया जाए।

यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि भारत सरकार ने दस्तकारियों के विकास के लिए अखिल भारतीय दस्तकारी मण्डल और पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, भोपाल तथा असम राज्यों को २ लाख रुपए से अधिक के ऋण और अनुदान देना स्वीकार किया है।

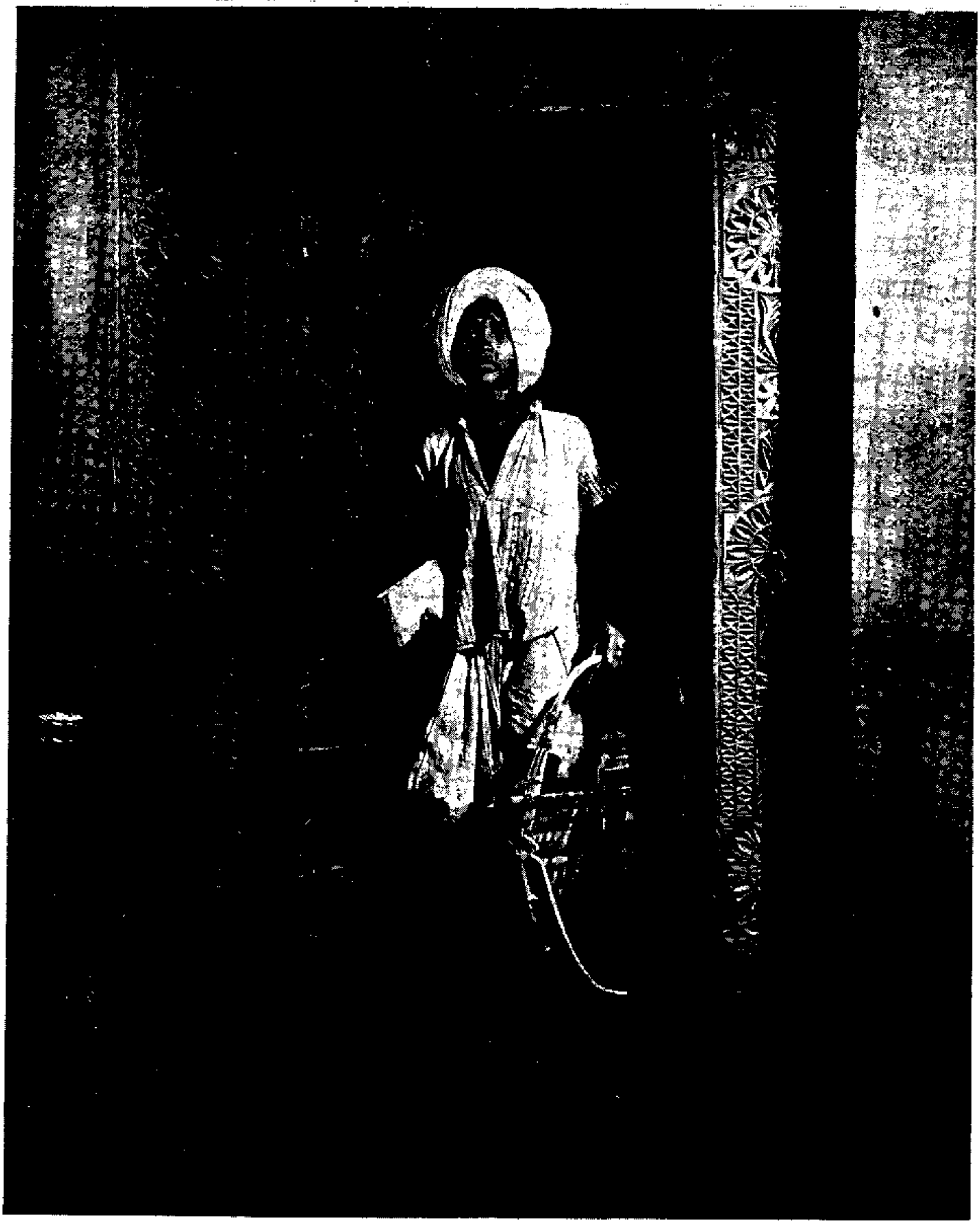

मध्य प्रदेश के एक सामुदायिक विकास-योजना-क्षेत्र का आदिवासी बालक
रात्रि कक्षा में पढ़ने जा रहा है

बाल-भारती

बच्चों की प्रिय मासिक पत्रिका

देश का भविष्य बच्चों के सही मानसिक विकास पर निर्भर करता है। इसी बात को ध्यान में रखकर बाल भारती का प्रकाशन पिछले ८ वर्षों से हो रहा है। बाल-भारती में हर महीने रोचक, प्रेरणादायक एवं उपदेशप्रद कहानियाँ, जीवनी, ज्ञान-विज्ञान सम्बन्धी लेख, चटकुले, कविताएं और काव्य कथाएं, रूपक और एकांकी आदि प्रकाशित किए जाते हैं। बाल-भारती का प्रत्येक अंक नयनाभिराम चित्रों से सुशोभित रहता है। देश-विदेश की गति के सम्बन्ध में भी सरल भाषा और शैली में लेख दिए जाते हैं। भारत और भारत से बाहर के प्रत्येक भाग की लोक-कथाओं को भी दिया जाता है। बाल भारती के विशेषांक अपनी अभिनव सजधज लेकर प्रकाशित होते हैं। अब तक अंतर्राष्ट्रीय कथा-अंक, खेल-कूद-अंक, बाल-लेखक अंक, हास्य-विनोद अंक आदि विशेषांक प्रकाशित हो चुके हैं। सुरुचिपूर्ण एवं ज्ञानवर्द्धक सामग्री के लिए बालक-बालिकाओं के हाथों में बाल-भारती की प्रति प्रत्येक महीने अवश्य ही देवें।

बाल-भारती का वार्षिक मूल्य ४) और एक प्रति का ६ आना मात्र है।

सभी प्रमुख पुस्तक विक्रेताओं से प्राप्त या सीधा लिखें--

बिज़नेस मैनेजर पब्लिकेशन्स डिवीज़न

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली--८

Printed by the Albion Press, Kashmere Gate Delhi-6, and Published on behalf of Community Projects Administration by the Publications Division, Delhi-8.